वैद्य शिवनारायण मिश्र भिषग्रत्न द्वारा
प्रकाश औषधालय के
प्रकाश प्रिंटिंग प्रेस कानपुर में मुद्रित।

वर्तमान भारतीय साहित्यिकों में डाक्टर सर रवीन्द्र नाथ का स्थान सबसे ऊँचा है। अर्वाचीन भारतीय कवियों में केवल आपकी प्रतिभा के सामने सारे देश ने ही नहीं, किन्तु सारे संसार ने सिर झुकाया है। "आँख की किरकिरी", "नौका डूबी", "गोरा", "घर बाहर" आदि उपन्यासों ने "नैवेद्य", "खेया" आदि काव्य ग्रन्थों, "रक्तकवरी", "मुक्तधारा" आदि नाटकों और अनेक लेखों और अख्यायिकाओं द्वारा आपने साहित्य का उपकार किया है। पर वह ग्रन्थ जिसने आप को संसार भर में प्रसिद्ध कर दिया, जिसके कारण आप को सवा लाख रुपये का नोबिल प्राइज़ नामक पारितोषिक मिला, जिस पर ईट्स, राथेन्सटेन और एन्ड्रूयूज ऐसे महानुभाव मुग्ध हो गये, और जो आपके सारे ग्रन्थों में सर्वश्रेष्ठ माना गया है, वह है "गीताञ्जलि"। हमने बँगला गीताञ्जलि की तुलना अँग्रेजी गीताञ्जलि से की है। हम कह सकते है कि कई अंशों में अँग्रेजी गीताञ्जलि बँगला गीताञ्जलि से बढ़ी चढ़ी है। यह पुस्तक उसी गीताञ्जलि का हिन्दी अनुवाद है। रवीन्द्र बाबू बंगाली हैं, और बँगला साहित्यसेवी हैं। पर आपकी अँग्रेज़ी बडी अलंकृत और चमत्कारिक है। उसे देखकर आप नहीं कह सकते कि वह एक बड़े अँग्रेज लेखक की भाषा नहीं है। फिर, रवीन्द्र बाबू की लेखनशैली बड़ी अटपटी और अलंकार पूर्ण होती है। मुहावरों की तो झडी बँध

जाती है। ऐसी भाषा का हिन्दी उलथा करना सहज नहीं। एक तो सूक्ष्म भावों के लिए हिन्दी में शब्द कठिनता से मिलते हैं, दूसरे वर्तमान लेखक भाषा पर प्रभुत्व रखने का दावा नहीं कर सकता।

अन्य महाकवियों की तरह रवीन्द्र ने भी अलंकार, उपमा और रूपकों का बहुतायत से प्रयोग किया है। यह प्राकृतिक दृश्यों से; घनघोर घटा, अँधेरी रात, रमणीय प्रभात, सुन्दर सूर्योदय इत्यादि से; प्रेमी प्रेमिकाओं के हाव भावों से, अन्य सांसारिक व्यवहारों से और विशेषतः गान वाद्य से (याद रहे कि रवीन्द्र बाबू महाकवि ही नहीं, किन्तु महागायक भी हैं) लिये गये हैं। इनको साधारणतः समझ लेना तो किसी साहित्य-प्रेमी के लिए कठिन न होगा पर इनके गूढ अभिप्रायों का ठीक ठीक पता लगाना टेढ़ी खीर है। इनके अनेक अर्थ हो सकते हैं। संभव है कि जो अभिप्राय हमने समझा, वह कवि का अभिप्राय न हो। सम्भव है कि कवि का अभिप्राय इतना उच्च और गुप्त हो कि वहाँ तक पहुँचना हमारी शक्ति के बाहर हो। अपने को कवि की स्थिति में—मानसिक अवस्था में—रक्खे बिना आप कवि के भाव पूर्णतया नहीं समझ सकते। रवीन्द्र की मानसिक अवस्था तक पहुँचना सबके लिए संभव नहीं। उनकी बहुत सी मानसिक अवस्थाओं को चित्त में लाना भी शायद असंभव हो। यह एक ऐसी कठिनता है जिस से महाकवियों के पाठक और अनुवादक अच्छी तरह परिचित हैं। कुछ ऐसे गीत हैं जो कवि ने अपनी निराली ही तरंग में लिखे हैं।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इन सब बातों के कारण अनुवाद करने में बड़ी कठिनाइयाँ पड़ी हैं। हमने प्रयत्न किया है कि गीतों के भाव पाठकों की समझ में आजायँ। न तो बँगला और न अँग्रेज़ी "गीतांजलि" में ही गीतों के शीर्षक दिये हुए हैं। हमने

प्रत्येक गीत का ऐसा शीर्षक बनाने का प्रयत्न किया है जो गीत के आन्तरिक भाव को प्रकट करता हो और जिसकी सहायता से पाठकों को सारा गीत समझने में सुविधा हो। बाज बाज शीर्षक बनाने में तो घण्टों विचार करना पड़ा है।

यहाँ यह कहना आवश्यक है कि पाठक इन गीतों को एक बार नहीं, दो बार नहीं, कई बार पढ़ें। भिन्न भिन्न समयों और भिन्न भिन्न अवस्थाओं में पढ़ें, तभी वे पूरा आनन्द और लाभ उठा सकेंगे। सुप्रसिद्ध अँग्रेज़ कवि मि० ईट्स इन गीतों के विषय मे लिखते हैः—"इनको मैंने यात्रा में बहुत दिनों तक अपने साथ रक्खा है। मैंने इनको रेलगाड़ियों में, घोडागाड़ियों में और होटलों मे पढा है। पढते पढते मैं बहुधा ऐसा उत्तेजित होगया हूँ कि उत्तेजना को छिपाने के लिए मुझे पुस्तक बन्द कर देना पडी है।"

प्रभात का वर्णन करने वाले एक गीत को आप एक बार अपने कमरे में बैठ कर पढ़िये। दूसरी बार उसी गीत को प्रभात के समय नदी के किनारे या जंगल के पेडों के नीचे या गाँव के खेतों में टहल टहल कर पढिये, आपको भेद मालूम हो जायगा। किसी गीत के प्रथम बार पढ़ने से जो प्रभाव मन पर पड़ेगा वह तीसरी या चौथी बार पढने के प्रभाव के सामने फीका जान पड़ेगा। शोक या चिन्ताग्रस्त मस्तिष्क में जो भाव उत्पन्न होंगे वह प्रफुल्ल चित्त पर उत्पन्न होने वाले भावों से भिन्न होंगे।

इसी प्रकार पढ़ते पढते सब गीतों के आन्तरिक अभिप्राय में प्रवेश होना सम्भव है। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि बहुधा गीत के आन्तरिक भाव इतने छिपे रहते हैं कि सहसा उनका ध्यान भी नहीं आता। पर जब एक बार उनका पता लग गया तब सारे गीत में विचित्र आनन्द आने लगता है। उदाहरण देखिये।

छठवें गीत में कवि ने अपने जीवन को एक छोटा तुच्छ फूल माना है। वह परमेश्वर से प्रार्थना करता है कि इस तुच्छ भेंट को स्वीकार करे।

आठवाँ गीत कृत्रिमता और वाह्याडम्बर की निन्दा करता है। सज धज और नाम धाम के मनुष्य सब कहीं नहीं जा सकते, सब तरह के लोगों से बात चीत नहीं कर सकते, अपने संकुचित क्षेत्र के बाहर पैर नहीं रख सकते और इसलिये उनके जीवन का पूर्ण विकास नहीं होता।

तेतीसवाँ गीत बतलाता है कि प्रलोभन कैसी चालाकी से हृदय में प्रवेश करते हैं और फिर अवसर पाकर अपना पूरा अधिकार कैसे जमा लेते हैं।

पैंतीसवें गीत में एक आदर्श समाज का चित्र खींचा गया है।

बासठवें गीत में कवि कहता है कि बालक के द्वारा प्रकृति—परमेश्वर—का रहस्य कैसे समझ में आता है। रंग बिरंगे खिलौने देख कर बालक प्रसन्न होता है, इसलिये पिता उसे रंग बिरंगे खिलौने देता है। इसी प्रकार परमेश्वर ने जगत को प्रसन्न करने के लिए मेघ, जल और फूलों को रंग बिरंगा कर दिया है।

दो चार गीत ऐसे भी हैं जो केवल कवियों या महात्माओं पर लागू हैं, और जिनका साधारण जनों से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं।

इक्यासीवें गीत में कवि कहता है कि मैंने बहुधा समय के नाश पर पश्चात्ताप किया है पर वास्तव में समय कभी व्यर्थ नष्ट ही नहीं हुआ। सम्भव है कि यह कथन कवियों के विषय में ठीक हो, पर औरों के विषय में ठीक नहीं हो सकता।

गीतांजलि में अनेक प्रकार के गीत मिलेंगे। ४, ६, ३४, ३५, ३६, ३६, ७६, और १०२ संख्या के गीतों में परमेश्वर से प्रार्थना की गई है।

२, ३, ७, १२, १५, १६, ४६ और १०१ संख्या के गीतों में गाने बजाने की भाषा का प्रयोग किया गया है। जैसा कि हम कह चुके हैं, रवीन्द्र बाबू बड़े भारी गायक हैं और इसलिये कोई आश्चर्य नहीं कि प्रार्थना, प्राकृतिक दृश्य, जीवन-मरण, बन्धन मोक्ष आदि सब ही विषयों में आपने गाने बजाने की भाषा का समावेश कर दिया है।

१६, २२, ४०, ४८, ५२, ५७, ५६, ६१, ६८ और ८० संख्या के गीतों में प्राकृतिक दृश्यों का अच्छा वर्णन है।

कवियों की दृष्टि सौन्दर्य पर बड़ी जल्दी जा पड़ती है। जहाँ साधारण नेत्रों को कोई मनोहरता नहीं दिखलाई पड़ती, या कुरूप ही कुरूप दिखलाई पड़ता है, वहाँ कवि के नेत्र सौन्दर्य ढूँढ निकालते हैं।

३, १२, १६, ४१, ४३, ४६, ५६, ६६, ६६, ७१, ८७, ६६ और १०० संख्या के गीतों में (Mysticism) अलौकिकता, गूढ़ता, रहस्ययुक्तता की झलक है।

कवि अपनी आत्मा को सर्वव्यापी आत्मा में मिला देना चाहता है। ब्रह्मलय की दृष्टि से वह जीवन, मरण, देश, काल आदि पर विचार करता है। उसके लिए मृत्यु कोई भयंकर दुखप्रद-वस्तु नहीं। वह तो अनन्त जीवन में प्रवेश करने का द्वार है। अनन्त के साथ विवाह करने की रस्म है। ब्रह्म के पास जाने, ब्रह्म में मिल जाने का

मार्ग है। यही कारण है कि आप को रवीन्द्र बाबू की कविता में मृत्यु और परलोक की प्रशंसा मे बहुत से गीत मिलेगे।

आशा है कि जो महाशय बँगला या अँग्रेजी जानते है उनको इस हिन्दी अनुवाद से उन भाषाओं की गीतांजलि के समझने मे सहायता मिलेगी।

हम दीनबन्धु सी-एफ एंड्रूज महोदय के हृदय से कृतज्ञ है जिनके प्रयत्न से महाकवि ने गीतांजलि के हिन्दी रूपान्तर के प्रकाशित करने की आज्ञा दी है।

विषय-सूची

प्रकाश पुस्तकालय द्वारा

प्रकाशित

रवीन्द्र बाबू के ग्रन्थ

गोरा	[उपन्यास]	३)
घर बाहर	[,,]	१।)
मुक्तधारा	[नाटक]	॥=)

महाकवि सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर

प्रकाश प्रेस.

तेरी कृपा

१

तूने मुझे अनन्त बनाया है, ऐसी तेरी लीला है. तू इस भंगुर-पात्र (शरीर) को बार बार खाली करता है और नवजीवन से उसे सदा भरता रहता है.

तू ने इस बाँस की नन्हीं सी बाँसुरी को पहाड़ियों और घाटियों पर फिराया है और तूने इसके द्वारा ऐसी मधुर तानें निकाली हैं जो नित्य नई हैं.

मेरा छोटा सा हृदय, तेरे हाथों के अमृतमय स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को खो देता है और फिर उसमें ऐसे उद्गार उठते हैं जिनका बयान नहीं हो सकता.

तेरे अपरिमित दानों की वर्षा मेरे इन क्षुद्र हाथों पर (अहर्निशि) होती है. युग के युग बीतते जाते हैं और तू उन्हें बराबर बरसाता जाता है और यहाँ भरने के लिये स्थान शेष ही रहता है.

गान-महिमा

२

जब तू मुझे गाने की आज्ञा देता है तो प्रतीत होता है कि मानों गर्व से मेरा हृदय टूटना चाहता है. मैं तेरे मुख की ओर निहारता हूँ, और मेरी आँखों में आँसू आ जाते हैं.

मेरे जीवन में जो कुछ कठोर और अनमिल है वह मधुर स्वरावलि में परिणत हो जाता है; और मेरी आराधना उस प्रसन्न पक्षी की तरह अपने पर फैलाती है जो उड़ कर सिन्धु पार कर रहा हो।

मैं जानता हूँ कि तुझे मेरा गाना अच्छा लगता है. मैं जानता हूँ कि तेरे सम्मुख मैं गायक ही के रूप में आता हूँ.

तेरे जिन चरणों तक पहुँचने की आकांक्षा भी मैं नहीं कर सकता था, उन्हें मैं अपने गीतों के दूर तक फैले हुए परों के किनारे से छू लेता हूँ.

गाने के आनन्द में मस्त होकर मैं अपने स्वरूप को भूल जाता हूँ और स्वामी को सखा पुकारने लगता हूँ.

विराट गायन

३

ऐ मेरे स्वामी ! न जाने तुम कैसे गाते हो. मै तो आश्चर्य से अवाक् होकर सदा ध्यान मे सुनता रहता हूॅ.

तुम्हारे गान का प्रकाश सारे जगत् को प्रकाशित करता है. तुम्हारे गान का प्राणवायु लोक-लोकान्तर में दौड़ रहा है. तुम्हारे गान की पवित्र धारा पथरीली रुकावटों को काटती हुई वेग से बह रही है.

मेरा हृदय तुम्हारे गान में सम्मिलित होने की बडी उत्कंठा रखता है परन्तु प्रयत्न करने पर भी आवाज़ नहीं निकलती. मैं बोलना चाहता हूँ किन्तु वाणी गीत के रूप में प्रगट नहीं होती. बस, मै अपनी हार मान लेता हूँ.

ऐ मेरे स्वामी ! तुमने मेरे हृदय को अपने गान रूपी जाल के अनन्त छिद्रों का बॅधुआ बना लिया है.

मेरा संकल्प

४

हे जीवन-प्राण, यह अनुभव करके कि मेरे सब अंगों में तेरा सचेतन स्पर्श हो रहा है मैं अपने शरीर को सदैव पवित्र रखने का यत्न करूँगा.

हे परम-प्रकाश, यह अनुभव करके कि तूने मेरे हृदय में बुद्धि के दीपक को जलाया है मैं अपने विचारों से समस्त असत्यों को दूर रखने का सदैव यत्न करूँगा.

यह अनुभव करके कि इस हृदय-मन्दिर के भीतर तू विराजमान है मैं सब दुर्गुणों को अपने हृदय से निकालने और [तेरे] प्रेम को प्रस्फुटित करने का सदैव यत्न करूँगा.

यह अनुभव करके कि तेरी ही शक्ति मुझे काम करने का बल देती है मैं अपने सब कामों में तुझे व्यक्त करने का सदैव यत्न करूँगा.

उत्कण्ठा

५

तू केवल क्षण भर अपने पास मुझे बैठने दे, जो काम मुझे करने हैं उन्हें फिर कर लूँगा.

तेरे मुखारविन्द से अलग रह कर मेरे हृदय को न कल मिलती है और न शान्ति, और मेरा काम परिश्रम के अपार सागर में अत्यन्त कष्टदायक हो जाता है.

आज मेरे झरोखों में ठंढी साँसें लेते और बड़बड़ाते हुए वसन्त का आगमन हुआ है और कुसुमित कुञ्जों के प्रांगण में मधुमक्खियाँ गुंजार कर रही हैं.

अब मेरे सन्मुख स्थित होकर बैठने और जीवन समर्पण का गीत गाने का शान्तिमय और अत्यधिक अवकाश है.

जीवन-पुष्प

६

इस नन्हें से पुष्प को तोड़ ले और इसे (अपने हाथ में) ले ले, विलम्ब न कर ! मुझे डर है कि कहीं यह मुरझा कर धूल में न गिर जाय.

तेरी माला में चाहे इसे स्थान न मिले किन्तु अपने कर-कमल के स्पर्श से इसका मान तो कर और तोड़ ले. मुझे डर है कि कहीं मेरे जाने बिना ही भेंट का समय न निकल जाय.

यद्यपि इसका रंग गहरा न हो और इसकी गंध हलकी ही हो. तिस पर भी इस पुष्प को अपनी सेवा में लगा ले और समय रहते रहते इसे तोड़ ले.

अलंकार-तिरस्कार

७

मेरे गीतों ने अपने अलंकारों को उतार डाला है; उन्हें वस्त्रालंकार का अहंकार नहीं है.

आभूषण हमारा संयोग नहीं होने देते, वे तेरे और मेरे बीच में आ जाते हैं; उनकी झंकार से तेरी धीमी आवाज दब जाती है.

तेरे सामने मेरा कविपने का मिथ्या गर्व लज्जा से मर जाता है. हे कवीन्द्र, मैं तेरे चरणारविन्दों में बैठ गया हूँ. बस, मुझे अपने जीवन को सरल और सीधा बनाने दे और बाँस की बाँसुरी की भाँति उसे तेरे लिये राग रागिनियों से भरने दे.

भूषण-भार-बालक

८

तुम जिस बालक को राजकुमार के वस्त्रों से सजाते हो और जिसके गले में हार पहनाते हो, उसके खेल का सारा आनन्द नष्ट हो जाता है, उसके वसन-भूषण उसके प्रत्येक पद की गति को रोकते हैं.

इस भय से कि कहीं वे घिस न जाएँ या धूल से मैले न हो जाएँ, वह अपने आप को सब से दूर रखता है और चलने फिरने से भी डरता है.

हे माँ, यदि टीमटाम के तेरे बन्धन पृथ्वी की स्वस्थ धूलि से किसी को अलग रखते हैं, यदि वे समान मानव जीवन के विराट हाट के प्रवेशाधिकार से किसी को वंचित करते हैं तो उनसे कोई लाभ नहीं.

प्रभु-निष्ठा

९

ऐ मूर्ख ! अपने ही कंधो पर आप ही चढ़न का प्रयत्न ! ऐ भिक्षुक, अपने ही द्वार पर भिक्षा मॉगना !

अपने समस्त भारों को उसके हाथों में छोड़ दे जो सब सह सकता है और दुखी होकर पीछे कभी नहीं देखता.

जिस दीपक पर तेरी तृष्णा फूक मारती है वह उसके प्रकाश को तुरन्त बुझा देती है. वह अपवित्र है, उसके अशुद्ध हाथों से कोई वस्तु ग्रहण मत कर. केवल उसी को स्वीकार कर जो पावन प्रेम द्वारा प्राप्त हो.

दीनबन्धु

१०

जहाँ दीनातिदीन, नीचातिनीच और नष्टभ्रष्ट निवास करते हैं वहाँ तेरे चरण विद्यमान हैं.

जब मैं तुझे प्रणाम करने का उद्योग करता हूँ, मेरा प्रणाम उस गहराई तक नहीं पहुँच सकता जहाँ दीनातिदीन, नीचातिनीच और नष्टभ्रष्टों के बीच में तेरे चरण विराजमान हैं.

अहंकार की वहाँ तक गति ही नहीं है, जहाँ दीनातिदीन, नीचातिनीच और नष्टभ्रष्टों के बीच दरिद्रियों के वेष में तू विचरता है.

मेरे मन को उस स्थान का मार्ग कभी नहीं मिल सकता जहाँ दीनातिदीन, नीचातिनीच और नष्टभ्रष्टों के बीच में निस्संगियों के संग तू विद्यमान है.

सच्ची उपासना

११

इस पूजापाठ भजनगान और माला के जाप को छोड़; सब द्वारों को बंद करके मन्दिर के एकान्त अँधेरे कोने में तू किस की पूजा करता है ? आँखें तो खोल और देख कि तेरा ईश्वर तेरे सामने नहीं है.

वह तो वहाँ है जहाँ किसान कड़ी भूमि में हल चला रहा है और सड़क बनाने वाला पत्थर तोड़ रहा है. वह धूप और पानी में उनके साथ है और उसके कपड़े धूल से आच्छादित हो रहे हैं. तू अपने पवित्र वस्त्र को उतार डाल और उसके समान धूल भरी भूमि में उतर आ.

मुक्ति ? मुक्ति कहाँ मिल सकती है ! हमारे स्वामी ने स्वयं अपने आप को सृष्टि के बंधनों में सहर्ष डाला है, वह हम सब के साथ सदा के लिए बँधा है.

ध्यान और समाधि (के जंजाल) से बाहर निकल आ और धूप और पुष्पों को एक ओर छोड़ दे. यदि तेरे कपड़े फट जाएँ और उनमें धब्बे लग जाएँ तो हानि ही क्या है ? उस से मिल, उस के संग मेहनत कर और उस के साथ पसीना बहा.

दीर्घ-यात्रा

१२

मेरी यात्रा में बड़ा समय लगता है और उसका मार्ग लम्बा है.

मैं यात्रा के लिए प्रकाश की प्रथम किरण के रथ पर निकला था. ग्रहों और तारों में, लोक और लोकान्तरों में. वनों और पर्वतों में घूम फिर कर मैं अपने भ्रमण के चिन्ह छोड़ आया हूँ.

सब से अधिक दूरी का मार्ग ही तेरे सब से निकट आ जाता है और वह शिक्षा सब से अधिक विषम या गूढ़ है जिस के द्वारा अत्यन्त सरल स्वर निकाला जा सकता है.

यात्री को अपने द्वार पर पहुँचने के लिए प्रत्येक पराये द्वार को खटखटाना पड़ता है.

मेरे नेत्र दूर और निकट सब कहीं भटके, तत्पश्चात मैंने उन्हें मीचकर कहा 'तुम कहाँ विराजमान हो' ?

पूर्णप्राय

१३

जिस गीत को गाने के लिए मैं आया था वह आज तक नहीं गाया गया.

मैंने अपने दिन अपने बाजे के तारों को ठीकठाक करने में व्यतीत कर दिये.

ताल ठीक न हो पाया, और शब्द भी ठीक नहीं बैठे, मेरे हृदय में केवल अभिलाषा की यंत्रणा विद्यमान है.

कली नहीं खिली है केवल उसके समीप आहें भर रही है.

मैंने उनका मुख नहीं देखा है और न उनका कंठस्वर ध्यान से सुना है, मैंने तो घर के सामने वाली सड़क से उनके चरणारविन्द की आहट मात्र सुन पाई है.

सारा दिन आसन बिछाने में बीत गया, किन्तु दीपक नहीं जलाया गया, कहो, अब उनको घर में कैसे बुलाऊँ ?

मै उन से मिलने की आशा में जी रहा हूँ, परन्तु अब तक भेंट नहीं हुई.

कठोर करुणा

१४

मेरी कामनाएँ अनेक हैं और मेरी पुकार करुणाजनक है. किन्तु कठोर अस्वीकारों के द्वारा तूने मुझे सदा बचाया है; तेरी यह प्रबल करुणा मेरे जीवन में ओतप्रोत हो रही है.

अत्यधिक कामना के संकटों से बचा कर दिन प्रतिदिन तू मुझे उन साधारण महादानों के योग्य बना रहा है जो तूने मुझे बिना माँगे दिये थे; जैसे यह आकाश, प्रकाश, तन, मन और प्राण.

कभी कभी मैं आलस्य से पीछे रह जाता हूँ और फिर जब जागता हूँ तो अपने लक्ष की तलाश में दौड़ पड़ता हूँ; किन्तु तू निष्ठुरता से अपने आपको छिपा लेता है.

निर्बल तथा अनिश्चित कामना के संकटों से बचा कर अस्वीकारों द्वारा तू मुझे अपनी पूर्ण स्वीकृति के योग्य बना रहा है.

केवल गान

१५

मैं तेरे लिए गीत गाने को यहाँ उपस्थित हूँ. तेरे इस मन्दिर के एक कोने में मेरा स्थान है.

तेरी सृष्टि में मुझे कोई काम नहीं करना है. मेरे निरर्थक जीवन से कुछ तानें कभी कभी निष्प्रयोजन निकल सकती हैं.

आधीरात के अँधेरे मन्दिर में जब तेरी उपासना का घण्टा बजे तब मुझे गाने के लिए अपने सम्मुख खड़े होने की आज्ञा प्रदान कर.

प्रभात वायु में जब सुनहरी वीणा का सुर मिलाया जाता है, तब अपनी सेवा में उपस्थित होने की आज्ञा देकर मेरा मान कर.

मेरी अन्तिम आकांक्षा

१६

इस जगत के उत्सव में मुझे निमन्त्रण प्राप्त हुआ और इस प्रकार मेरा जीवन सफल हुआ है. मेरे नेत्र देख चुके हैं और मेरे श्रवण सुन चुके है.

इस उत्सव में वीणा बजाने का कार्य्य मुझे दिया गया था, मुझ से जो कुछ हो सका मैने किया.

मैं पूछता हूँ कि क्या अन्त में अब वह समय आ गया है कि अन्दर जाकर तेरे मुखारविन्द का दर्शन करूँ और अपना नीरव नमस्कार तुझे समर्पित करूँ ?

प्रेम प्रतीक्षा

१७

अन्त में प्रेम के करकमलों में आत्मसमर्पण करने के लिए केवल मैं उस की प्रतीक्षा कर रहा हूँ; इसी से इतनी देर हुई है और इसी से इतनी त्रुटियाँ हुई हैं.

लोग अपने विधि-विधानों से मुझे जकड़ने के लिए आते हैं, किन्तु मैं उन्हें सदा टाल देता हूँ; क्योंकि मैं तो केवल प्रेम के करकमलों में आत्मसमर्पण करने के लिए उस की प्रतीक्षा कर रहा हूँ.

लोग मुझ पर दोष लगाते हैं और मुझे असावधान कहते है, निःसन्देह उनका दोष लगाना ठीक है.

हाट का दिन बीत गया और कामकाजियों का काम समाप्त हो गया. जो मुझे वृथा बुलाने आये थे कुपित होकर लौटे, अन्त में प्रेम के करकमलों में आत्मसमर्पण करने के लिए मैं केवल उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ.

प्रेम से शिकायत

१८

बादल पर बादल उमड़ रहे हैं और अँधेरा होता जाता है. ऐ प्रेम, तूने मुझे द्वार के बाहर बिलकुल अकेला क्यों बैठा रक्खा है ?

दोपहर में कामकाज के समय मैं जनता के साथ रहता हूँ, परन्तु आज इस अन्धकार के समय मैं केवल तेरी ही आशा करता हूँ.

यदि तू मुझे अपना मुख न दिखलाएगा और मुझे बिलकुल एक ओर छोड़ देगा तो न मालूम वर्षा के ये लंबे घण्टे कैसे कटेंगे.

मैं आकाश के दूरस्थ धुंध पर टकटकी लगाए हूँ और मेरा चित्त चञ्चल वायु के साथ विलाप करता हुआ भटक रहा है.

प्रेम-धीर

१६

प्यारे, अगर तू न बोलेगा तो मैं अपने हृदय को तेरे मौन से भर लूँगा और उसे सहन करूँगा। मैं चुप-चाप पड़ा रहूँगा और तारों से भरी और धीरता से अपना शिर झुकाए हुए रात्रि की भाँति, प्रतीक्षा करूँगा।

निस्सन्देह प्रभात का आगमन होगा और अन्धकार का नाश होगा और तेरी वाणी की सुनहरी धाराएँ आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

तब मेरे पक्षियों के प्रत्येक घोंसले से तेरे शब्द गीतों के रूप में उड़ेंगे और मेरी समस्त वन-वाटिकाओं में तेरे सुर फूलों के रूप में खिल उठेंगे।

अंतरंग-सरोज

२०

जिस दिन कमलपुष्प खिला, शोक, कि मेरा चित्त चंचल हो रहा था, और मैंने उसे जाना ही नहीं. मेरी टोकरी खाली थी और पुष्प की ओर मेरा ध्यान नहीं गया.

केवल कभी कभी मेरे चित्त पर उदासी छा जाती थी और मैं अपने स्वप्न से चौंक उठता था, और दक्षिण-समीर में विचित्र सौरभ की मधुरता सी अनुभव होती थी.

उस मन्द मधुर गन्ध ने मेरे मन में लालसा की यन्त्रणा उत्पन्न करदी, और मुझे मालूम हुआ कि यह वसन्त की उत्सुक वायु है जो इसकी पूर्णता के लिए प्रयत्नवान है.

मैंने तब नहीं जाना था कि वह इतने निकट है, वह मेरी ही है और यह पूर्ण माधुर्य्य मेरे ही अन्तःकरण की गहराई में प्रस्फुटित हुआ है.

अब चल दो

२१

इस बार मैं अपनी नौका को समुद्र में अवश्य डालूँगा किनारे के तीर मेरा समय आलस्य में बीता जाता है, अरे, मेरे लिए यह बड़े खेद की बात है.

वसन्त की बहार हो चुकी और वह बिदा हो रहा है. अब मैं कुम्हलाए हुए निरर्थक फूलों के भार को लिये रुका पड़ा हूँ.

तरंगें कोलाहलमय हो रही हैं, और किनारे पर छाया-दार पथ में पीली पत्तियां झर झर कर गिर रही हैं.

किस शून्य की ओर तुम ताक रहे हो? क्या तुम वायु में फैलते हुए उल्लास को अनुभव नहीं करते जो सुदूर गायन के सुरों के साथ दूसरे तट से बह बह कर आ रहा है?

हृदय-द्वार

२२

बरसते हुए सावन की घनी छाया में, दबे पैरों, रात्रि सा निस्तब्ध, और सब पहरेवालों से बचता हुआ, तू चलता है.

शब्दायमान पूर्वी हवा की निरन्तर पुकारों की (झोकों की) कुछ परवाह न करके आज प्रभात ने अपनी आँखें मूँद ली हैं, और एक घनघोर घटा का घूँघट सदा जाग्रत नीले आकाश पर पड़ गया है.

कानन भूमि ने गीत गाना बन्द कर दिया है, हर घर के द्वार बन्द हैं. इस निर्जन पथ का तू ही एक पथिक है. हे मेरे एकमात्र मित्र ! हे मेरे प्रियतम ! मेरे घर के फाटक खुले हैं, स्वप्न की भाँति पास से निकल न जाना.

प्रेम-अधीर

२३

क्या तू इस प्रचण्ड रात्रि में अपनी प्रेम-यात्रा के लिए बाहर निकला है, मेरे मित्र ? आकाश हताश की तरह विलाप करता है।

मुझे आज नींद नहीं। रह रह कर मैं द्वार खोलता हूँ और अँधेरे में बाहर की ओर देखता हूँ, मित्र !

सामने कुछ दिखाई नहीं देता। मैं विस्मित हूँ कि तेरा रास्ता किधर है !

हे मित्र, कालिमा सी काली नदी के किस काले किनारे से, भयंकर वन की किस सुदूर सीमा से, अन्धकार की किस गहन गहराई से होकर मेरे पास आने के लिए तू अपने मार्ग पर टोह टोह कर पैर रख रहा है ?

आलसी और अधम जीवन से मृत्यु बेहतर है

२४

यदि दिन बीत गया है, यदि पक्षी अब नहीं चह-चहाते, यदि वायु शिथिल पड़ गया है, तब तो अन्धकार का भारी घूँघट मेरे ऊपर वैसे ही डाल दे, जैसे तूने पृथ्वी को निद्रा की चद्दर उढ़ाई है और कुम्हलाए कमल की पखड़ियों को संध्या समय सुकुमारता के साथ बंद कर दिया है.

उस यात्री की लज्जा और दरिद्रता को दूर कर और अपनी दयामय रात्रि के आश्रय में उसे पुष्प की भाँति नव-जीवन प्रदान कर, जिसके पदार्थों का झोला यात्रा समाप्त होने के पूर्व ही खाली हो गया है, जिस के बस्त्र फट गये हैं, जिन में धूल भर गई है और जिसका बल क्षीण हो गया है.

प्यारी निद्रा

२५

थकावट की रात में तुझ पर भरोसा करके, बिना प्रयास, मुझे अपने आप को निद्रा के अर्पण करने दे.

मेरे अलसाए हुए चित्तको अपनी प्रजा की दरिद्र साधना के लिए बाधित मत कर.

जागृतावस्था का नवीन आनन्द पुनः प्रदान करने के लिए तू ही दिन की थकी हुई आँखों पर रात का परदा डाल देता है.

प्रेमी का स्वप्न

२६

वह आया और मेरे पास बैठ गया किन्तु मैं न जागा. मुझ अभागे की उस नींद को धिक्कार है.

वह ऐसे समय आया जब रात का सन्नाटा था. उसकी वीणा उसके हाथों में थी, उसकी मधुर रागनियों से मेरा स्वप्न प्रतिध्वनित हो गया.

हाय ! मेरी रातें इस प्रकार क्यों नष्ट होती हैं ?

अरे ! मैं उसके दर्शन से क्यों वंचित रहता हूँ, जिसकी श्वास मेरी निद्रा को स्पर्श करती है ? (अर्थात्, जो मेरे इतने निकट आ जाता है और जिसकी श्वास मेरे शरीर में लगती है.)

प्रेम की ज्योति

२७

ज्योति, अरे कहाँ है ज्योति ? इसे कामना की प्रचण्डानल से प्रज्वलित करो.

दीपक है परन्तु उसमें लव का अणु मात्र भी नहीं है—ऐ मेरे मन ! क्या तेरे प्रारब्ध में यही है ? अरे, इस से तो तेरे लिए मृत्यु कहीं अच्छी होती.

दुःख रूपी दूत तेरे द्वार पर खटखटा रहा है, और उसका सन्देशा यह है कि तेरा स्वामी जागता है और रात्रि के अन्धकार में वह तुझे प्रेमाभिसार के लिए बुला रहा है.

आकाश मेघाच्छादित है और वर्षा की झड़ी लगी है. न मालूम यह क्या है जो मेरे चित्त में हरकत कर रही है.

मुझे उस का अभिप्राय नहीं मालूम, दामिनि की क्षणिक छटा मेरे नेत्रों पर घोरतर अन्धकार फैला देती है, और मेरा हृदय उस मार्ग की टोह लगाता है जिस की ओर निशा का गायन मुझे बुलाता है.

ज्योति, अरे कहाँ है ज्योति ! इसे कामना की प्रचण्डानल से प्रज्वलित करो. बिजली कड़क रही है और शून्याकाश में सनसनाती हुई वायु वेग से बह रही है. रात्रि ऐसी काली है जैसे काला पत्थर. अन्धकार में समय को यों ही न बीतने दो. प्रेम के दीपक को अपने जीवन से प्रज्वलित करो.

वासना की बेड़ी

२८

बेड़ियाँ बड़ी कड़ी हैं, किन्तु मेरे हृदय को बड़ी व्यथा होती है जब मैं उन के तोड़ने का यत्न करता हूँ.

मुझे केवल मुक्ति की आकांक्षा है, किन्तु उसकी आशा करते हुए मुझे लज्जा आती है.

मेरा यह निश्चय है कि तू अमूल्य ऐश्वर्य का भण्डार है और तू मेरा सर्वोत्तम मित्र है किन्तु मुझ में इतना साहस और बल नहीं कि मै झूठी तड़क भड़क के सामान को जो मेरे कमरे में भरा है, निकाल बाहर करूँ.

मैं ने जिस चादर को ओढ़ा है वह मट्टी और मृत्यु की चादर है; मै उस से घृणा करता हूँ, तथापि प्रेम से उसे गले लगाता हूँ.

मेरा ऋण भारी है, मेरी विफलता बड़ी है, मेरी लज्जा गुप्त है और हृदय को दबाये देती है, तथापि जब मैं अपने कल्याण के लिए याचना करने आता हूँ तब मैं भय से काँप उठता हूँ कि कहीं मेरी प्रार्थना स्वीकार न हो जाय.

अपने ही कारागार का बन्दी

२९

जिसे मैं अपने नाम से नामांकित करता हूँ वह इस कारागार में विलाप करता है. मैं सदा अपने सब ओर इस दीवार के बनाने में लगा रहता हूँ; और ज्यों ज्यों यह दीवार आकाश में उठती जाती है उसकी अँधेरी छाया में मेरा सत्यस्वरूप मेरी दृष्टि से छिपता जाता है.

मैं इस बृहत् दीवार का गर्व करता हूँ और मट्टी तथा रेत का गारा उस पर चढ़ाता हूँ कि कहीं इस नाम (दीवार) में ज़रा सा भी छिद्र न रह जाय; और इस सारी चिन्ता का परिणाम यह होता है कि मेरा सत्यस्वरूप मेरी दृष्टि से छिपता जाता है.

हठीला साथी

३०

तुझ से मिलने के लिए मैं अकेला निकला था. परन्तु यह कौन है जो नीरव अन्धकार में मेरे पीछे पीछे चला आ रहा है ?

उस से बचने के लिए मैं इधर उधर हट जाता हूँ किन्तु मैं उस से बच नहीं पाता.

वह अपनी धृष्ट चाल से धरणी से धूल उड़ाता है; वह मेरे प्रत्येक शब्द के साथ ज़ोर से बोल उठता है.

वह मेरा ही तुच्छ आत्मा है, मेरे प्रभु ! लज्जा उसे छू तक नहीं गई ; किन्तु मुझे उसके संग तेरे द्वार पर आने में लज्जा आती है.

अद्भुत बन्धन

३१

"बन्दी ! मुझे यह तो बता कि तुझे किस ने बाँधा ?" बन्दी ने कहा :—"मेरे स्वामी ने मुझे बाँधा है. मैं ने सोचा था कि जगत के बीच धन और बल में मैं सब से आगे निकल सकता हूँ, और मैं ने अपने ही कोश में उस रुपये को भी जमा कर लिया जो मुझे राजा को देना चाहिए था. जब मैं निद्रा के वशीभूत हुआ तो उस शय्या पर लेट गया जो मेरे स्वामी की थी और जगने पर मुझे मालूम हुआ कि मैं अपने ही कोशालय का बन्दी हूँ."

"बन्दी ! मुझे यह तो बता कि इस अटूट बेड़ी को किसने बनाया ?" बन्दी ने उत्तर दिया,—"मैं ने स्वयम् ही बड़े यत्न से इस बेड़ी को बनाया है. मैं सोचता था कि मेरा प्रबल प्रताप सारे संसार को बन्दी कर लेगा और अकेला मैं ही शान्ति पूर्वक स्वाधीनता को भोगूँगा. अतएव रात दिन घोर परिश्रम कर के बड़ी बड़ी भट्टियों और हथौड़ों द्वारा इस बेड़ी के बनाने में तत्पर रहा. अन्त में जब काम समाप्त हुआ और कड़ियाँ पूर्ण और अटूट हो गईं, तो मुझे ज्ञात हुआ कि उस ने मुझे खूब जकड़ लिया है.

विलक्षण प्रेम

३२

संसारी जनों का प्रेम मुझे सब तरह से बाँधने का यत्न करता है और मेरी स्वतंत्रता को छीन लेता है; परन्तु तेरा प्रेम जो उनके प्रेम से बढ़कर है, निराला है, वह मुझे दासता की शृंखला में नहीं बाँधता, किन्तु मुझे स्वतंत्र रखता है.

वे मुझे अकेला नहीं छोड़ते कि कहीं मैं उन्हें भूल न जाऊँ (इस एकाग्रता के अभाव का परिणाम यह है कि) एक एक कर के दिन बीतते जाते हैं और तू दिखाई नहीं देता.

अगर मैं अपनी प्रार्थनाओं में तुझे नहीं पुकारता, अगर अपने हृदय में तुझे धारण नहीं करता, तब भी तेरा प्रेम मेरे प्रेम की प्रतीक्षा करता है.

प्रलोभन का प्रभाव

३३

दिन के समय वे मेरे घर में आये और कहने लगे—
"हमें अपने यहाँ रहने दो, हम ज़रा सी जगह में अपना निर्वाह कर लेंगे."

उन्होंने कहा, "ईश्वर आराधना में हम तुम्हारी सहायता करेंगे और जितना प्रसाद हमें मिलेगा उसी से हम संतुष्ट रहेंगे." यह कह कर वे एक कोने में चुपचाप और दीन होकर बैठ गये.

किन्तु अब मैं देखता हूँ कि रात्रि के अन्धकार में वे प्रबल और प्रचण्ड होकर मेरे पवित्र मन्दिर में घुस आये और अपवित्र लोभ से प्रेरित होकर मेरे परमेश्वर की वेदी से चढ़ावों को उठा लेगये.

स्वल्प याचना

३४

मुझ में ममत्व की केवल इतनी मात्रा रहने दे जिस से मैं तुझे अपना सर्वस्व कह सकूँ.

मुझ में कामना की केवल इतनी मात्रा रहने दे जिस से मैं हर दिशा में तुझे अनुभव कर सकूँ, हर वस्तु में तुझे प्राप्त कर सकूँ और हर घड़ी अपना प्रेम तुझे अर्पण कर सकूँ.

मुझ में अहंकार की केवल इतनी मात्रा रहने दे जिस से मैं तुझे कभी न छिपा सकूँ.

मेरी बेड़ी का केवल इतना भाग रहने दे जिससे मैं तेरी इच्छा के साथ बँधा रहूँ और अपने जीवन में तेरे उद्देश को पूरा करूँ, और वह बेड़ी तेरे प्रेम की है.

आदर्श भारत

३५

जहाँ चित्त भयशून्य है, जहाँ मस्तक उच्च रहता है, जहाँ ज्ञान मुक्त है, जहाँ जगत (राष्ट्र) क्षुद्र घराऊ दीवारों से खण्ड खण्ड नहीं कर दिया गया है, जहाँ शब्द सत्यता की गहराइ से निकलते हैं, जहाँ अनथक पुरुषार्थ अपनी भुजाओं को पूर्णता की ओर बढ़ाता है, जहाँ तर्क की निर्मल धारा ने अपने मार्ग को मृत-रूढ़ि (रस्म-रवाज) की भयानक मरु-भूमि में नष्ट नहीं कर दिया है, जहाँ (के निवासियों का) मन सदा विस्तृत होने वाले विचारों और कर्म्मों की ओर अग्रसर रहता है. ऐ मेरे पिता! स्वतन्त्रता के ऐसे दिव्य लोक में मेरा प्यारा देश जागृत हो.

बल-भिक्षा

३६

मेरे प्रभु ! मेरी तुझ से यह प्रार्थना है कि मेरे हृदय की दरिद्रता की जड़ पर तू कुठाराघात कर.

वह बल दे जिस से मैं सुख और दुख को सहज ही में सहन कर सकूँ.

मुझे वह बल दे जिस से मैं अपने प्रेम को सेवा और परोपकार द्वारा सफल कर सकूँ.

मुझे वह बल दे जिस से मैं दीन दुखियों को कभी परित्याग न करूँ और अपने घुटनों को अभिमानी सत्ता-धारियों के सामने कभी न झुकाऊँ.

मुझे वह बल दे कि जिस से मैं अपने मन को नित्य की तुच्छ बातों से बहुत ऊपर रक्खूँ.

मुझे वह बल दे जिस से मैं अपनी शक्ति को प्रेम पूर्वक तेरी इच्छा के वशीभूत कर दूँ.

अनन्त यात्रा

३७

जब मेरी शक्ति (क्षीणता की) अन्तिम सीमा पर पहुँची तो मैंने सोचा कि मेरी (जीवन) यात्रा का अन्त हो गया, अर्थात् अब मेरे आगे का मार्ग बन्द होगया, खान पान की सामग्री सब खर्च होगई और अब समय आगया है कि मैं शान्तिमय एकाग्रता और अविख्याति में आश्रय लूँ.

किन्तु मैं देखता हूँ कि मुझ में तेरी इच्छा का अन्त नहीं होता. और जब पुरातन शब्द मर जाते हैं तो हृदय मे नूतन स्वरावलि का प्रादुर्भाव होता है; जहाँ प्राचीन मार्ग नष्ट हो जाते हैं वहाँ नवीन देश अपने अद्भुत चमत्कारों के साथ प्रकट होते हैं.

केवल तेरी चाह

३८

तेरी चाह है, मुझे केवल तेरी चाह है, हे नाथ, मेरा मन सदा यही कहता रहे. सारी वासनाएँ रात दिन मेरे चित्त को चञ्चल रखती हैं, मिथ्या और नितान्त निस्सार हैं.

रात्रि जैसे प्रकाश के लिए की गई प्रार्थना को अपने अन्धकार में छिपाये रखती है—अर्थात् रात्रि के अन्धकार में जैसे प्रकाश अप्रगटरूप से विद्यमान रहता है—वैसे ही मेरी अचेतन अवस्था में भी मेरे अन्तःकरण में यह पुकार उठती है, तेरी चाह है, मुझे केवल तेरी चाह है.

जैसे आँधी जब शान्ति पर अपना बलिष्ट आघात करती है (अर्थात् जब शान्ति को भंग करती है) तब भी वह अपना अन्तिम आश्रय शान्ति में ढूँढती है, वैसे ही मेरा द्रोह तेरे प्रेम पर आघात करता है और तिसपर भी उसकी पुकार है—तेरी चाह है, मुझे केवल तेरी चाह है.

संकट-हरण

३६

जब मेरा हृदय कठोर और शुष्क होजाए तो मेरे ऊपर करुणा की झड़ी बरसाइए।

जब मेरे जीवन से माधुरी (नम्रता, दयादि) लुप्त हो जाय तब मेरे पास गीत-सुधा के साथ आइए.

जब सांसारिक काम काज का प्रचंड कोलाहल सब ओर से इतना उठे कि मैं सब से अलग होकर एकान्त में जा बैठूँ, तो हे शान्ति के नाथ, आप सुख और शान्ति के साथ मेरे पास आइए.

जब मेरा कृपण हृदय दीन हीन होकर एक कोने में बैठ जाय, तो हे मेरे राजन्, द्वार खोल कर आप राज-समारोह के साथ आइए.

जब वासना, माया और मल से मेरे मन को अन्धा करदे, तो, हे शुद्ध और चेतन प्रभु, आप अपने प्रकाश और गर्जना के साथ आइए.

वर्षा के लिये प्रार्थना

४०

हे इन्द्र, मेरे शुष्क हृदय में अति दीर्घकाल से अनावृष्टि है ! दिक्-चक्र (क्षितिज) में भयंकर नग्नता व्याप्त है—मेघ का आवरण नाममात्र के लिए नहीं है, सुन्दर शीतल बौछार का तनिक चिह्न भी नहीं दीखता.

हे देव, यदि तेरी इच्छा हो तो काल के समान काली और कुपित आँधी को भेज और दामिनि की दमकों से गगन मंडल को आद्योपान्त चकित करदे, परन्तु हे प्रभु, इस व्याप्त, निःशब्द, निस्तब्ध, प्रखर, निठुर ताप को बुलालो, वह तीव्र नैराश्य से हृदय को दहन किए देता है.

जैसे पिता के क्रोध करने पर माता सन्तान की ओर सजल नयनों से देखती है वैसे ही करुणा-रूपी मेघों को ऊपर से मुझ पर बरसने दे.

प्रेममयी प्रतीक्षा

४१

है मेरे प्रियतम, तू अपने आप को छाया में छिपाए सब के पीछे कहाँ खड़ा है ? लोग तुझे कुछ नहीं समझते और धूल से भरी सड़क पर तुझे दबा कर तेरे पास से निकल जाते हैं. मैं पूजा की सामग्री सजाकर घंटों तेरी बाट जोहती हूँ; पथिक आते हैं और मेरे फूलों को एक एक करके लेजाते हैं. मेरी डलिया करीब करीब खाली होचुकी है.

प्रातःकाल बीत गया और दोपहर भी निकल गई. संध्या के अँधेरे में मेरे नेत्रों में नींद आ रही है. निज गृहों को जानेवाले मेरी ओर देखते हैं और मुसकराते हैं तथा मुझे लजाते हैं. मैं एक भिखारिन लड़की की भाँति अपने मुख पर अंचल डाल कर बैठी हूँ और जब वे मुझसे पूछते हैं कि तू क्या चाहती है, तो मैं अपनी आँखें नीचे कर लेती हूँ और उन्हें उत्तर नहीं देती.

हाय, मैं उनसे कैसे कहूँ कि मै उनका रास्ता देख रही हूँ और उन्होंने आने का वादा किया है. लाज के

मारे मैं कैसे कहूँ कि यह दरिद्रता ही मैंने भेंट के लिए रक्खी है.

अहो, मैंने इस अभिमान को अपने हृदय में छिपा रक्खा है. मैं घास पर बैठी हुई आशा भरे नयनों से आकाश की ओर निहारती हूँ और तेरे अचानक आगमन के वैभव का स्वप्न देखती हूँ. स्वप्न में सब दीपक जल रहे हैं, तेरे रथ पर सुनहरी ध्वजाएँ फहरा रही हैं और लोग मार्ग में यह देख कर अवाक् खड़े रह जाते हैं कि तू इस फटे पुराने कपड़ों को पहनने वाली भिखारिन लड़की को धूल से उठाने के लिए अपने रथ से उतरता है और उसे अपने एक ओर बैठाता है, जो लाज और मान के कारण ग्रीष्म-पवन से लता की भाँति काँपती है.

समय बीतता जाता है और तेरे रथ के पहियों की कोई आवाज़ अब तक सुनाई नहीं देती. बहुत से जलूस बड़ी धूमधाम और चमक दमक के साथ निकलते जाते हैं. क्या केवल तू ही सब के पीछे छाया तले चुपचाप खड़ा रहेगा और क्या केवल मैं ही प्रतीक्षा करती रहूँगी और व्यर्थ कामना के वशीभूत हो रो रो कर अपने हृदय को जीर्ण करूँगी ?

संयोग में विलम्ब और आशा

४२

बिल्कुल सवेरे यह निश्चय हुआ था कि हम दोनों-तू और मैं—एक नाव में बैठ कर चलेंगे और संसार में किसी को हमारी इस लक्ष्यहीन और उद्देशहीन यात्रा का पता न लगेगा.

उस अपार सागर में तेरे शान्त श्रवण और मधुर मुस्क्यान पर मेरे गीत तरंगों की तरह स्वतंत्र और शब्दों के बन्धन से मुक्त मधुर ध्वनियों में परिणत होजायँगे.

क्या वह समय अब तक नहीं आया है ? क्या अभी कुछ काम किये जाने को बाक़ी हैं ? यह देखो, किनारे पर अँधेरा होने लगा और शाम के झुटपुटे में समुद्र के पक्षी उड़ उड़ कर अपने घोसलों को जा रहे हैं.

न मालूम जंजीरें कब खुलजाँय और न जाने सूर्य्यास्त की अन्तिम झिलमिलाहट के समान यह नौका रात्रि में कब विलीन होजाय ?

अज्ञात आगमन का स्मरण

४३

एक दिन वह था जब मैं तेरे लिये तैयार न था परन्तु तिसपर भी, हे मेरे स्वामी, एक साधारण जन की भाँति मेरे बिना बुलाये और मेरे बिना जाने तू ने मेरे हृदय में प्रवेश किया और मेरे जीवन के कुछ अनित्य क्षणों पर नित्यता की मोहर लगादी.

और आज जब अकस्मात् उन पर मेरी दृष्टि पड़ती है और तेरे हस्ताक्षर देखता हूँ तो पता लगता है कि वे (क्षण) तुच्छ विस्मृत दिनों के हर्ष और शोक की घटनाओं की स्मृति के साथ बिखरे और भुलाए हुए पड़े हैं.

मुझे लड़कपन के खेल खेलते हुए देख कर तू ने घृणा से अपना मुँह नहीं फेरा. तेरे जिन पदों की ध्वनि मैंने अपने क्रीड़ास्थल में सुनी थी, आज उन्हीं की प्रतिध्वनि तारे तारे में गूँज रही है.

धैर्यपूर्ण आशा

४४

सड़क के किनारे पर जहाँ प्रकाश के पीछे अन्धकार होता है और गर्मी के पीछे बरसात होती है, तेरी बाट जोहने और तेरा मार्ग देखने में मुझे बड़ा आनन्द आता है.

दूतगण, लोकों से सम्वाद लाकर मुझे बधाई देते हैं और तेजी से अपने रास्ते चले जाते हैं. मेरा मन अन्दर ही अन्दर प्रसन्न होता है और बहती वायु सुगन्धित मालूम होती है.

प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक अपने द्वार के सामने बैठा रहता हूँ और मेरा निश्चय है कि अकस्मात् सुख की वह घड़ी आवेगी जब मुझे उसके दर्शन होंगे.

इस बीच में मैं अकेला हँसता और गाता हूँ. और इसी बीच में वायु आशा की सुगन्ध से भर रही है.

आता है

४५

क्या तुमने उसके चरणों की मन्द ध्वनि नहीं सुनी है ? वह आता है, वह आता है, वह नित्य आता है.

हर घड़ी, हर काल, हर दिन और हर रात में वह आता है, आता है, वह नित्य आता है. मैंने अपने मन की भिन्न भिन्न दशाओं में नाना प्रकार के गीत गाए हैं किन्तु उन सबके सुरों से सदा यही उद्घोषित हुआ है, वह आता है, वह आता है, वह नित्य आता है.

यह उसी के चरण कमल हैं जो शोक और दुःख में मेरे हृदय को दबाते हैं और यह उसी के पदारविन्द का सुनहरा संसर्ग है जो मेरे आनन्द को स्फुरित करता है.

लो, वह आगया

४६

मैं नहीं जानता कि तू कितने काल से मुझ से मिलने के लिए मेरे निकट निरन्तर आ रहा है. तेरे सूर्य और चन्द्र तुझे सदा के लिये मुझ से नहीं छिपा सकते.

प्रभात और संध्या के समय अनेक बार तेरे चरणों की ध्वनि सुन पड़ी है और तेरे दूतों ने मेरे हृदय में आकर मुझे चुपचाप बुलाया है.

मैं नहीं जानता कि आज मेरा मन इतना विचलित क्यों है, और मेरे हृदय में आनंद के भाव क्यों उठ रहे हैं ?

जान पड़ता है कि अब काम काज बंद करने की वेला आ गई है और मैं तेरे मधुर आगमन की मंद गंध को वायु में अनुभव करने लगा हूँ.

साक्षात दर्शन

४७

उस की रास्ता देखते हुए प्रायः सारी रात बीत गई. मुझे डर है कि जब मै थक कर सो जाऊँ तो कहीं वह मेरे द्वार पर न आजाय. मित्रो, उसके लिए मार्ग खुला रखना—उसे कोई मना न करना.

यदि उसके पैरों की आहट से मेरी नींद न खुले तो कृपा कर कोई मुझे जगाना मत. मैं पक्षियों के कलरव और वायु के कोलाहल से प्रातःकालीन प्रकाश के महोत्सव में निद्रा से उठना नहीं चाहता. यदि मेरा स्वामी मेरे द्वार पर अचा-नक आ भी जाय तो शान्ति से मुझे सोने देना.

आह, मेरी नींद! मेरी प्यारी नींद! तू तो उसी समय विदा होगी जब वह तेरा स्पर्श करेगा. ऐ मेरे बंद नेत्रो! तुम तो अपनी पलकों को उस की मुसक्यान की ज्योति में खोलोगे, जब वह मेरे सामने स्वप्न के समान आकर खड़ा होजायगा.

सब ज्योतियों और सब रूपों में सब से पहले मेरी दृष्टि में उसे आने दो. मेरी जाग्रत आत्मा में आनन्द की सब से पहिली तरंग उसकी कटाक्ष से उत्पन्न होने दो. मुझे ज्योंही अपने स्वरूप का ज्ञान हो त्योंही मुझे उसकी उपलब्धि होने दो.

सरल सिद्धि

४८

शान्ति का प्रभात-रूपी समुद्र पक्षियों के गान-रूपी तरंगों में फूट निकला. मार्ग के दोनों ओर पुष्प खिल रहे थे और सुनहरी किरणें बादलों की दरारों से निकल कर इधर उधर छिटकी हुई थीं. परन्तु, हम कार्यवश अपने रास्ते पर चले जाते थे, और हम लोगों ने सुख के कोई गीत नहीं गाये और न कोई खेल ही खेला. बाज़ार के लिए हम गॉव में नहीं गये और न हम हॅसे बोले और न मार्ग में हीं ठहरे. ज्यो ज्यों समय बीतता जाता था हम अपने पैर तेज़ी से उठाते जाते थे.

सूर्य मध्य आकाश में चढ़ गया. पक्षी छाया में कुहॅू कुहॅू करने लगे.

दोपहर की तप्तवायु में कुम्हलाई हुई पत्तियॉ नाचतीं और चक्कर लगाती थीं.

गड़रिये का लड़का बट की छाया में अचेतन पड़ा था. मैं जलाशय के पास लेट गया और अपने थके हुए अंगों को घास पर फैला दिया.

मेरे साथियों ने मेरी हँसी उड़ाई और घमण्ड से सिर ऊँचा किये हुए तेज़ी से आगे बढ़े चले गये. उन्होंने पीछे की ओर एक बार भी नहीं देखा और न अभिवादन किया. थोड़ी देर में सुन्दर नील छाया में दृष्टि से छिप गये. उन्होंने अनेक मैदानों और पहाड़ियों को पार किया और कितने ही बड़े बड़े देश उनके रास्ते में पड़े. वीर यात्रियो, तुम धन्य हो. उपहास और निन्दा ने मुझ से उठने का आग्रह किया परन्तु मेरे हृदय ने एक न मानी. मैंने अपने आपको रमणीय वृक्षों की छाया के तले आनन्दमय अगाध अगौरव में निमग्न कर दिया.

रवि-रश्मियों की सुन्दर कारीगरी से विभूपित हरित छाया का विश्राम धीरे धीरे अपना प्रभाव मेरे हृदय पर डालने लगा. मैं यह भूल गया कि मै किस लिए यात्रा करने निकला था. मनोरम छाया और मधुर गान के कौतुक में मुझे अनायास ही आचेतन होजाना पड़ा.

अन्त में जब मेरी नींद खुली और मैंने अपने नेत्रों को खोला तो मैंने देखा कि तू मेरे पास खड़ा है और अपनी मंद हँसी से मेरी निद्रा को प्लावित कर रहा है. कहाँ तेरे मार्ग की थकाने वाली लम्बाई और तुझ तक पहुँचने की कठिनाई का भय, और कहाँ यह सुगमता और सुलभता !

सच्चे भाव की महिमा

४६

तुम अपने सिंहासन से नीचे उतर आए और मेरी कुटी के द्वार पर आ खड़े हुए.

मैं अकेला एक कोने में बैठा गा रहा था और मेरी आवाज़ तुम्हारे कर्णगोचर हुई. बस, तुम नीचे उतर आए और मेरी कुटी के द्वार पर आकर खड़े होगए.

तुम्हारी सभा में बहुत से प्रवीण गवैये हैं और वहाँ सदा गान हुआ करता है, परंतु इस नवसिखिये के गाने से तुम्हारा प्रेम फड़क उठा. मेरा एक करुण अल्प सुर विश्व के विराट-गान में मिल गया और एक पुष्प-रूपी पारितोषिक लेकर तुम नीचे उतर आए और मेरी कुटी के द्वार पर ठहर गए.

दान महात्म्य

५०

जब मैं द्वार द्वार भिक्षा माँगने के लिए ग्राम में गया था तब एक शोभामय स्वप्न की भाँति दूर से आता हुआ तेरा स्वर्ण-रथ दिखाई दिया और मैं विस्मित हुआ कि यह राजों का राजा कौन है।

मेरी आशाएँ उच्च होगईं और मैंने सोचा कि मेरे दुर्दिन का अब अन्त आ पहुँचा है, और मै इस आशा में कि आज विना माँगे ही मुझे भिक्षा मिलेगी, खड़ा होगया.

रथ मेरे पास आकर रुक गया. मेरे मुख पर तेरी दृष्टि पड़ी और तू हँसता हुआ रथ से उतर आया. मुझे प्रतीत हुआ कि मेरे जीवन का भाग्योदय होगया. इसके वाद तूने अपना दाहिना हाथ अकस्मात् मेरी ओर वढ़ाया और कहा, "तेरे पास मुझे देने के लिए क्या है?"

अरे, यह क्याही राजकीय उपहास है कि एक भिखारी के सामने भिक्षा के लिए तू अपना हाथ फैलावे! मै यह देख कर सटपटा गया और अनिश्चित अवस्था में खड़ा रह गया. तदुपरान्त मैने अपनी झोली से अन्न का सबसे छोटा दाना धीरे से निकाला और उसे दे दिया.

परन्तु जब संध्या समय मैंने अपनी झोली को आँगन में खाली किया तो दानों की ढेरी में सोने का एक कण मिला जिस पर मुझे वड़ा आश्चर्य हुआ. मैं फूट कर रोया और यह इच्छा हुई कि मैंने अपना सर्वस्व साहस पूर्वक क्यों न दे डाला.

अवसर की उपेक्षा

५२

रात्रि का अंधकार छा गया था. दिन के सब काम समाप्त होगये थे. हमारा ख्याल था कि जिनको आना था वे आ चुके. ग्राम के सब द्वार बंद हो गये थे. केवल कुछ ने कहा कि "महाराज आने वाले हैं" किंतु हमने हँसकर कहा "नहीं. ऐसा नहीं हो सकता." अब मालूम पड़ा कि द्वार पर खटखटाहट है. इस पर हमने कहा "हवा के सिवा और क्या हो सकता है." बस, दीपक बुझा दिये और सोने के लिए लेट गये. कुछ लोग बोल उठे.

"अब दूत आ पहुँचे." किन्तु हमने हँस कर कहा, "नहीं वह हवा ही है."

सूनसान रात में फिर एक आवाज़ आई. हम लोग नींद में समझे कि यह दूर के बादलों की गरज है. लो. अब पृथ्वी कँपी, दीवालें हिलीं और हमारी निद्रा में फिर विघ्न पड़ा. कुछ लोग कहने लगे कि "यह पहियों की आवाज़ है." किन्तु हमने औंघाई में बड़बड़ाते हुए कहा, 'नहीं, यह तो मेघों की गर्जना है.'

अभी रात का अँधेरा बाक़ी था कि भेरी बज उठी. आवाज़ आई, "जागो, विलम्ब मत करो." हमने दोनों हाथो से अपनी छाती दाबली और भयसे काँप उठे. कुछ ने कहा, "लो, राजा की ध्वजा दिखाई देती है." हम पैरों के बल खड़े होगये और चिल्लाये, "अब देर करने का समय नहीं है, महाराज आ पहुँचे—आरती और सिंहासन कहाँ हैं, हाँ, कहाँ है भवन, और कहाँ है सारी सजावट." एक ने कहा, "अब रोना वृथा है, खाली ही हाथों से स्वागत करो और अपने बे-सजे घर में ले आओ. द्वार खोल दो और शंख बजने दो, अँधेरे घर का राजा आया है, आकाश में मेघ गरज रहे हैं, अन्धकार दामिनि की दमक से कम्पायमान है, अपने फटे पुराने आसन को लेआओ और आँगन में बिछा दो."

मेरा नवीन शृंगार

५२

मैंने सोचा था कि गुलाब के फूलों का जो हार तेरे गले में है उसे मैं तुझसे माँगूँगा, किन्तु मेरा साहस नहीं पड़ा. मैं प्रातःकाल तक इस आशा में बैठा रहा कि जब तू चला जायगा तो तेरी शय्या पर हार के एक दो पुष्प मैं भी पा जाऊँगा. किन्तु एक भिखारी की भाँति मैंने बहुत सवेरे उसकी तलाश की और फूल की एक दो पँखड़ियों के सिवा और कुछ नहीं पाया.

अरे, यह क्या है जिसे मैं वहाँ देखता हूँ! तू ने अपने प्रेम का यह कैसा चिह्न छोड़ा है! वहाँ न तो कोई पुष्प है और न गुलाब–पात्र. यह तो तेरी भीषण कृपाण है जो एक ज्वाला की भाँति प्रज्वलित होती है और इन्द्र-वज्र के समान भारी है. प्रभात की नवीन प्रभा झरोखों से आती है और तेरी शय्या पर फैल जाती है.

प्रातःकालीन पक्षी चहचहाते हैं और मुझ से पूछते हैं, तुझे क्या मिला? नहीं, न तो यह पुष्प है और न गुलाब-पात्र, यह तो भीषण कृपाण है.

मैं बैठ जाता हूँ और चकित होकर सोचता हूँ कि यह तेरा कैसा दान है? मुझे ऐसा कोई स्थान नहीं मिलता जहाँ मैं इसे छिपा सकूँ. मैं दुर्बल हूँ और इसे पहनते हुए मुझे लाज आती है, और जब मैं इसे अपने हृदय से लगाता हूँ तो वह मुझे पीड़ा पहुँचाती है. तिस पर भी मैं इस वेदना के मान को—तेरे इस दान को—अपने हृदय में धारण करूँगा.

आज से मेरे लिए इस जगत में भय का अभाव हो जायगा और मेरे सारे जीवन-संग्राम में तेरी जय होगी. तू ने मृत्यु को मेरा साथी बनाया है और मैं अपने जीवन-रूपी मुकुट से उसके मस्तक को सुभूषित करूँगा. तेरी कृपाण मेरे सब बन्धनों को काटने के लिए मेरे पास है और मेरे लिए अब सांसारिक कोई भय न रह जायगा.

आज से मैं समस्त तुच्छ शृंगारों को तिलांजलि देता हूँ. ऐ मेरे हृदयनाथ, आज से एकान्त में बैठ कर रोने और प्रतीक्षा करने का अन्त है. आज से लज्जा और संकोच की इतिश्री है. तू ने अपनी कृपाण मुझे शृंगार के लिए प्रदान की है. गुड़ियों का साज-बाज मेरे लिए अब उचित नहीं है.

चूड़ी और खड्ग की तुलना

५३

तेरी चूड़ी क्या ही सुन्दर है. वह तारों से खचित और असंख्य रंगबिरंगे रत्नों से चतुरतापूर्वक जटित है . परन्तु तेरी बिजली के समान बाँकी खड्ग इससे भी अधिक मनोहर मुझे जान पड़ती है; वह विष्णु के गरुड़ के फैले हुए पंखों की भाँति है और डूबते हुए सूर्य्य की रक्त-ज्योति में पूर्णतया सधी हुई है.

काल के अन्तिम प्रहार से उत्पन्न हुई अत्यन्त तीव्र वेदना में जीवन के अन्तिम श्वास की भाँति वह कँपकँपाती है. वह उस आत्मा की पवित्र ज्योति के समान चमकती है, जिसने अपनी एकही भीषण ज्वाला से पार्थिव भावों को भस्म कर डाला है.

तेरी चूड़ी क्या ही सुन्दर है. वह तारों सदृश रत्नों से जटित है; किन्तु तेरी खड्ग, हे वज्रपाणि, चरम सौन्दर्य से रची गई है जिसको देखने या जिस पर सोचने से भय मालूम होता है.

अनोखा परोपकार

५४

मैंने तुझ से कुछ नहीं माँगा; मैंने अपना नाम तुझे नहीं बताया, जब तू विदा हुआ तो मैं चुपचाप खड़ा रहा.

मैं उस कुएं के पास अकेला था जहाँ वृक्ष की छाया तिरछी पड़ती थी, जहाँ रमणियाँ अपने घटों को मुँह तक भर कर अपने अपने घर जा रही थीं. उन्होंने मुझे चिल्लाकर बुलाया और कहा, "हमारे साथ आओ, प्रभात तो बीत गया और मध्याह्न हो रहा है." किन्तु मैं आलस से ठिठक गया और संकल्प विकल्पो में डूब गया.

जब तू आया तो मैंने तेरी पदध्वनि नहीं सुनी. जब तेरी आँखें मुझ पर पड़ीं तो उन पर उदासी छाई थी, जब तू ने धीमें स्वर मे कहा. "अरे, मैं एक प्यासा पथिक हूँ", तब तेरा कण्ठ थका हुवा था. मैं यह सुनकर चौंक पड़ा और अपने घट से तेरी अंजुली में जल डाला. शिर के ऊपर पत्तियाँ खड़खड़ा रही है, कोयल ने अदृश्य अन्धेरे में कुहू कुहू का राग अलापा और सड़क की मोड़ से पुष्पों की सुगंधि का आगमन हुवा.

जब तू ने मेरा नाम पूँछा तो लज्जावश मैं अवाक् रह गया. वास्तव में मैंने ऐसा कौन सा तेरा कार्य किया था जिसके लिए तू मुझे याद रखता ? किन्तु मेरी यह स्मृति कि मैं जल देकर तेरी प्यास बुझा सका, मेरे मन मे सदा रहेगी और माधुर्य मे विकसित होगी.

दुःख में सुख की आशा

५५

तुम्हारे हृदय पर आलस्य छाया हुआ है और तुम्हारे नेत्रों में निद्रा अब तक विद्यमान है.

क्या यह सम्बाद तुम्हारे पास नहीं आया कि पुष्प बड़े ऐश्वर्य के साथ कंटकों में राज्य कर रहा है? अरे जगे हुए जाग, समय को वृथा न जाने दे!

पथरीले पथ के अन्त में, अगम विजन देश में मेरा मित्र अकेला बैठा हुआ है, उसे धोखा मत दो. अरे जगे हुए जाग!

यदि मध्याह्न सूर्य के ताप से गगन काँपे, या हाँपे-तो क्या? यदि तप्त बालू पिपासा के अंचल को फैला दे तो क्या?

क्या तुम्हारे अन्तःकरण में आनन्द नहीं है? क्या तुम्हारे प्रत्येक पग पर मार्ग की वीणा वेदना के मधुर स्वर में न बज उठेगी?

प्रेमियों की एकता

५६

मुझ में तुझे भरपूर आनन्द आता है, इसलिए अपने ऊँचे आसन से तुझे नीचे उतरना पड़ा है. हे सर्वभुवनेश्वर, यदि मैं न होता तो तेरा प्रेम कहाँ होता ?

तू ने मुझे इस सारे ऐश्वर्य मे साझी किया है, मेरे हृदय में तेरा आनन्द अनन्त लीलायें किया करता है. मेरे जीवन में तेरी इच्छा सदा स्वरूप धारण करती है.

हे राजराजेश्वर, तभी तो मेरे हृदय को मोहित करने के लिए तू ने अपने आपको सुन्दरता से विभूपित किया है. और तभी तो तेरा प्रेम मेरे प्रेम में लीन होजाता है, और यहीं पर दोनों की पूर्ण एकता में तेरा दर्शन होता है.

प्रकाश

५७

प्रकाश, मेरे प्रकाश, भुवन को भरने वाले प्रकाश, नयनों को चूमने वाले प्रकाश, हृदय को मधुर करने वाले प्रकाश, ऐ मेरे प्यारे, प्रकाश मेरे जीवन के केन्द्र पर नृत्य कर रहा है, प्रकाश मेरे प्रेम की बीना बजा रहा है, प्रकाश से आकाश में जागृति होती है, वायु वेग मे बहती है और सारी पृथ्वी हँसने लगती है. प्रकाश के सागर में तितलियाँ अपने पाल (पंख) फैलाती हैं. प्रकाश की तरंगों की चोटी के ऊपर मल्लिका और मालती हिलोरें मारती हैं. मेरे प्यारे, प्रकाश की किरणें बादलों पर पड़ कर सुवर्णरूप होजाती हैं और सहस्रों मणियों को गगनमण्डल में बिखराती हैं. मेरे प्यारे, पत्ते पत्ते पर अपरिमित आनन्दोल्लास फैल रहा है. सुरसरिता ने अपने कूलों को डुबो दिया है और आनन्द की बाढ़ उमड़ रही है.

विश्वव्यापी आनन्द

५८

उस आनन्द के सब सुर मेरे अन्तिम गीत में आकर मिल जाएँ—जिसके वश होकर भूमि अपने ऊपर घनी घास अत्यन्त प्रचुरता से फैला लेती है; जो यमक भ्राता—जीवन और मृत्यु—को इस विस्तृत संसार में नचाता है, जो तूफान के साथ आता है और अट्टहास के साथ सारे जीवन को हिलाता और जगाता है, जो दुख के खिले हुए लाल कमल के ऊपर अपने आँसुओं से युक्त शान्ति से विराजता है, जो सर्वस्व को धूल में फेंक देता है और मुँह से एक शब्द भी नहीं निकालता।

प्रकृति में ईश्वरीय प्रेम का दिग्दर्शन

५६

ऐ मेरे प्रियतम, मैं जानता हूँ कि यह स्वर्णमय प्रकाश जो पत्तियों पर नाच रहा है, यह आलसी बादल जो आकाश में इधर उधर फिरते हैं, और प्रभात की मन्द मन्द यह वायु जो मेरे मस्तक को शीतल करती हुई बह रही है—यह सब तेरा प्रेम ही है.

प्रातःकाल के प्रकाश ने मेरे नयनों को प्लावित कर दिया है—मेरे हृदय के लिए यही तेरा सँदेशा है. ऊपर से तूने अपना मुख मेरी ओर झुकाया है, तेरे नेत्र मेरे नेत्रों पर लगे हैं और मेरे हृदय ने तेरे चरणों को छू लिया है.

लड़कपन

६०

अपार संसार के समुद्र-तट पर बालक एकत्र होते हैं. ऊपर आकाश में कोई चंचलता नहीं है, और अस्थिर जल में कोलाहल होरहा है. बालक अपार संसार के समुद्र-तट पर एकत्र होकर चिल्लाते और नृत्य करते हैं.

वे बालू से घर निर्माण करते हैं और खाली शंखों से खेलते हैं, सूखे हुए पत्तों की नावें बनाते हैं और उन्हें विपुल गंभीर सलिल पर हँस हँस कर तैराते हैं. बस, संसार के समुद्र पर लड़के ऐसेही खेलते रहते हैं.

वे नहीं जानते कि कैसे पैरते हैं, कैसे जाल डालते हैं. पनडुब्बे मोतियों के लिए डुबकी लगाते हैं, व्यापारी जहाज़ों पर जा रहे हैं. पर बालक केवल कंकड़ जमा करते और बिखरा देते हैं. वे गुप्त रत्नों को नहीं ढूँढ़ते और जाल डालना नहीं जानते. समुद्र हँसी से उमड़ा पड़ता है और तट की चमक पीतवर्ण की है. जैसे झूलना झुलाते समय माँ की लोरियाँ बच्चों को अर्थहीन जान पड़ती हैं वैसेही सागर की मृत्यु-वाहक तरंगे इन बालकों को अर्थहीन मालूम पड़ती हैं.

पथहीन आकाश में विकराल आँधी चलती है. सुदूर जल मे जहाज़ नष्ट होते हैं, मृत्यु सब जगह मँड़रा रही है, किन्तु बालक खेल ही रहे हैं. पारावार जगत के समुद्र-तट पर लड़कों का मेला है.

बालछवि का स्रोत

६१

क्या कोई जानता है कि बच्चे की आँखों में जो नींद आती है उसका आगमन कहाँ से होता है? हाँ, एक जन-श्रुति प्रसिद्ध है कि उसका वासस्थान वन की घनी छाया के बीचोबीच एक सुन्दर ग्राम में है जहाँ जुगनुओं का मन्द प्रकाश होता है और जहाँ दो मनमोहनी सुकुमार कलियाँ लटकती हैं! बस, इसी रमणीक स्थान से वह बच्चे की आँखों को चूमने आती है.

क्या कोई जानता है कि सोते हुए बच्चे के ओठों पर जो मुसक्यान प्रगट होती है उसका जन्मस्थान कहाँ है? हाँ, एक जनश्रुति प्रसिद्ध है कि शिशुचन्द्र की एक नवीन पीन किरण किसी शरद-मेघ की कोर से छू गई और इस प्रकार वहाँ शिशिर-शुचि-प्रभात की स्वप्नावस्था में मुसक्यान का पहले पहल जन्म हुआ.

क्या कोई जानता है कि वह मधुर कोमल लावण्य जो बच्चे के अंगों में विकसित हो रहा है इतने दिनों से कहाँ छिपा हुआ था? हाँ, जब माँ किशोरावस्था में थी तब यही मधुर कोमलता प्रगट रहस्यमय मृदु प्रेम के रूप में उसके हृदय में व्याप्त थी.

बालक द्वारा प्रकृतिरहस्य का बोध

६२

हे वत्स, जब मैं तुम्हारे लिए रंग बिरंगे खिलौने लाता हूँ तब मुझे जान पड़ता है कि बादल इतने रंग बिरंगे क्यों हैं, और पानी की तरंगों और झरनों में विविधवर्ण की रेखायें क्यों दिखाई पड़ती हैं, और फूल-पत्तों में इतना वर्ण-वैचित्र्य क्यों है.

हे वत्स, जब गीत गाकर तुम्हें नचाता हूँ तब मैं यथार्थ रूप से जानता हूँ कि वन की पत्तियों में इतना गायन क्यों होता है, और संसार के रसिक श्रोताओं के हृदय में समुद्र की तरंगों से अनेक स्वरों और रागों से परिपूर्ण गीत क्यों आते हैं.

हे वत्स, जब मैं तुम्हारे लोलुप करों में मिठाई देता हूँ तब मैं समझ जाता हूँ कि पुष्प-रूपी प्याले में मधु क्यों है और फलों में मधुर रस गुप्त रीति से क्यों भरा गया है.

हे वत्स, जब तुम्हें हँसाने के लिए मैं तुम्हारा मुँह चूमता हूँ, मैं यह अच्छी तरह समझ जाता हूँ कि वह कौन सा सुख है जो आकाश से प्रातःकालीन प्रकाश में प्रवाहित होता है, और वह कौन सा आनन्द है जिसे वसंत की शीतल मंद सुगन्ध समीर मेरे शरीर में उत्पन्न करती है.

जीवन विकाश में विधाता का हाथ

६३

तूने मेरा परिचय उन मित्रों से कराया है जिन्हें मैं नहीं जानता था. तूने मुझे उन घरों में बैठाया है जो मेरे नहीं थे. तू ने दूर को निकट कर दिया है और विगानों को वन्धु वना दिया है.

जब मुझे अपने पुरातन आश्रम को छोड़ना पड़ता है तो मेरा हृदय बेचैन होजाता है, मैं भूल जाता हूँ कि नूतन में पुरातन विद्यमान है और वहाँ तू भी विद्यमान है.

हे मेरे अनन्त जीवन के एकमात्र संगी ! इस लोक में या परलोक में जीवन-मरण द्वारा जहाँ कहीं तू मुझे लेजाता है वहाँ तू आनन्द के बंधनों से अपरिचितों के साथ मेरे हृदय को मिला देता है.

जब जीव तुझे जान जाता है, तब उसके लिए कोई वेगाना नहीं रहता, तब उसके लिए सब द्वार खुल जाते हैं. हे प्रभु, मुझे यह वर दो कि मैं अनेकत्व के बीच में एकत्व के अनुभवानन्द से कभी वंचित न रहूँ.

शक्तियों का दुरुपयोग

६४

निर्जन नदी के तीर घास के बन में मैनें उससे पूछा, "हे कुमारी, दीपक को अंचल से ढक कर तुम कहाँ जा रही हो ? मेरे घर में नितान्त अन्धकार और सुनसान है, कृपया अपना दीपक मुझे दे दो." उसने अपने कृष्ण नेत्रों को क्षण भर के लिए मेरी ओर उठाया और कहा,

"मैं इस नदी तट पर इस दीपक को सूर्य्यास्त के पश्चात् जल में बहाने के लिए आई हूँ." घास के वन में खड़े खड़े मैंने वायु से काँपते हुए दीप-शिखा को जलधारा में वृथा ही बहते देखा.

सायंकाल का अँधेरा होते होते मैंने उससे कहा, "हे कुमारी, जबकि तुम्हारे घर के सब दीपक जल रहे हैं, तब इस दीपक को लेकर तुम कहाँ जा रही हो? मेरे घर में नितान्त अन्धकार और सुनसान है, कृपया तुम अपना दीपक मुझे दे दो." उसने अपने कृष्ण नेत्र मेरी ओर उठाये और क्षण भर सशंकित खड़ी रही. अन्त में उसने कहा. "मैं अपने दीपक को आकाश की भेंट करूँगी." मैंने खड़े खड़े देखा कि शून्य गगन में दीपक वृथा ही जल रहा है.

चन्द्र विहीन अर्धरात्रि के अन्धकार में मैंने उससे पूछा "हे कुमारी, तुम इस दीपक को हृदय से लगाकर किस खोज में जारही हो? मेरे घर मे नितान्त अन्धकार और सुनसान है, तुम अपना दीपक मुझे देदो" वह क्षणभर ठहरी और कुछ सोचने लगी और अँधेरे में मेरे मुख की ओर देखने लगी. उसने कहा, "मैं इस दीपक को दीपावलि में सजाने लाई हूँ." मैं खड़ा रहा और ध्यान पूर्वक उसके छोटे से दीपक को अन्य दीपकों में व्यर्थ जलते हुए देखा.

भक्त और भगवान की एकता

६५

हे मेरे ईश्वर, मेरे जीवन के लबालब भरे पात्र से तू कौनसा दिव्य रस पान करना चाहता है ?

हे मेरे कवि, मेरी आँखों से अपनी सृष्टि को देखने और मेरे कानों के द्वार पर खड़े होकर अपने ही अविनाशी मधुर गान को चुपचाप सुनने में तुझे क्या आनन्द आता है ?

तेरे जगत से ही मेरे मन में शब्द-रचना होती है और तेरे आनन्द से उन में गान उत्पन्न होता है.

तू प्रेमवश होकर अपने को मुझे प्रदान कर देता है और फिर मुझ मे अपने ही पूर्णानन्द का अनुभव करता है.

अन्तिम भेंट

९६

वह जो सन्ध्या के आभास में मेरी आत्मा के अन्तरतम प्रदेश में विद्यमान रही, वह जिसने प्रभात के

आलोक में अपना घूँघट कभी नहीं खोला, हे मेरे ईश्वर, उसे मैं अपने अन्तिम गीत के द्वारा अन्त मे तेरी भेंट करूँगा.

वाणी ने उसे वश करना चाहा, पर कर न सकी. लोगों ने उत्सुकता और उत्साह से उसे समझाने और मनाने का यत्न किया, पर कृतकार्य्य न हुए.

मैं उसे अपने अन्तःकरण में धारण कर के देश विदेश फिरा, और वही मेरे जीवन की वृद्धि और क्षय का केन्द्र रही है.

मेरे विचारों और कर्मों, मेरी निद्राओं और स्वप्नों के ऊपर उसने राज्य किया है, पर वह अकेली और अलग रही है.

बहुतों ने मेरे द्वार को खटखटाया, उसके बारे में पूँछतॉछ की और निराश होकर चले गये. इस संसार में ऐसा कोई नहीं है जिसने उसका साक्षात् दर्शन किया हो. वह तेरी स्वीकृति की प्रतीक्षा करती हुई एकान्त में बैठी रही.

इहलोक और ब्रह्मलोक

६७

तूही आकाश है और तूही नीड़ है. हे सुन्दर, यह तेरा ही प्रेम है जो मेरी आत्मा को नाना वर्णों, नाना गीतों और नाना गन्धों से नीड़ में वेष्टित किये हुये है.

यहाँ ऊषा अपने दाहने हाथ में स्वर्ण की थाली में सौन्दर्य की माला लेकर चुपचाप धरा के ललाट को शान्ति-पूर्वक अलंकृत करने के लिए आती है.

पश्चिमी शान्त समुद्र से शीतल शान्तिवारि को स्वर्ण-झारी में भरकर चिह्नहीन मार्गों से होती हुई धेनु-शून्य मैदान में सन्ध्या यहाँ आ विराजती है.

परन्तु उस स्थान में, जहाँ अनन्त आकाश आत्मा की उड़ान के लिए फैला हुआ है, निर्मल उज्वल भास का राज्य है. वहाँ न दिन है, न रात है, न रूप है और न रंग है, नहीं, वहाँ एक शब्द भी नहीं है.

मेघ

६८

तेरी रविकिरण अपनी भुजाओं को बढ़ाए हुए इस पृथ्वी पर आती है और दिन भर मेरे द्वार पर इस लिए खड़ी रहती है कि मेरे आँसुओं, आहों और गीतों से बने हुए मेघों को तेरे चरणों में लेजाए.

सानुराग आनन्द से तूने अपने ताराजटित वक्षस्थल के आसपास धुँधले बादलों के आवरण को लपेट दिया है, तू उन्हें असंख्य रूपों और तहों में बदलता है और सदा परिवर्तनशील रँगों से रँगता है.

हे निरंजन और शान्त, वे बड़े हलके, चपल, कोमल, कारुणिक और श्यामल हैं; इसीलिए तू उन्हें इतना प्यार करता है और इसीलिए तो वे तेरे तेजस्वी उज्ज्वल प्रकाश को अपनी करुणामयी छाया से ढक लेते हैं.

विश्वव्यापी जीवन

६९

जीवन की जो धारा मेरी नसों में रात दिन बहती है, वही सारे विश्व में बेग से बह रही है और ताल सुर के साथ नृत्य कर रही है.

यह वही जीवन है जो पृथ्वी पर असंख्य तृणों के रूप में सहर्ष प्रकट हुआ करता है और फूल पत्तियों की तरंगों में आविर्भूत होता है.

यह वही जीवन है जो जीवन-मृत्यु रूपी समुद्र के ज्वार भाटे के पालने में हिलोरें मारता है.

मैं अनुभव करता हूँ कि मेरे अंग इस विश्वव्यापी जीवन के स्पर्श से रमणीक होते हैं और मुझे उस युगयुगान्तरवर्ती जीवन-स्पन्दन का अभिमान है जो इस समय भी मेरे रक्त में नृत्य कर रहा है.

विश्वव्यापी आनन्द

७०

क्या इस वाद्य के आनन्द से आनन्दित होना और इस भयंकर प्रमोद के भँवर में हिलोरें मारना और समाजाना तेरी शक्ति के परे है ?

सब चीज़ें वेग से बढ़ती जा रही हैं, वे ठहरती नहीं, वे पीछे नहीं देखतीं; कोई शक्ति उन्हें थाम नहीं सकती, वे आगे बढ़ती ही जाती हैं.

उस चंचल और वेगवान वाद्य के साथ साथ ऋतुयें नृत्य करती हुई आती हैं और चली जाती हैं. विविध राग रंग और गन्धों के अनन्त झरने उस परिपूर्ण आनन्द में आकर गिरते हैं जो प्रति क्षण फैलता और नष्ट होता है.

माया

७१

तेरी माया ऐसी है कि मैं अपने पर अभिमान करता हूँ और इस अभिमान को सब ओर लिये फिरता हूँ, और

इस प्रकार तेरे आभास पर रंगविरंगी छाया डालता रहता हूँ.

तू पहले अपने ही अंश करता है और फिर अपनी विच्छिन्न आत्मा को असंख्य नामों से पुकारता है. तेरा विच्छिन्न आत्मा मेरे शरीर के रूप में प्रकट हुआ है.

तेरे मर्मस्पर्शी गीतों की प्रतिध्वनि विविध प्रकार के आँसुओं, मुसक्यानों, भयों और आशाओं के रूप में सारे आकाश में हो रही है. लहरें ऊपर उठती हैं और फिर गिरती हैं. स्वप्न आते हैं और मिट जाते हैं.

इस सृष्टि रूपी यवनिका पर जिसकी रचना तूने की है, रात्रि दिवस रूपी लेखनी से असंख्य चित्र चित्रित किये गये हैं. इस के पीछे तेरा सिंहासन वाँकी रेखाओं के विचित्र रहस्यों से बनाया गया है. उस में कोई बन्ध्या सीधी रेखा नहीं है.

मेरी और तेरी महान प्रदर्शनी से सारा आकाश व्याप्त है. मेरे और तेरे सुर से सारा आकाशमण्डल गूँज रहा है. युगों के युग मेरी और तेरी आँखमिचौनी के खेल मे बीतते चले जाते हैं.

यह वही है

७२

वही तो मेरा अन्तरात्मा है जो मेरे जीवात्मा को अपने गंभीर अदृश्य स्पर्शों से जागृत करता है.

यह वही है जो इन नेत्रों पर अपना जादू करता है और मेरे हृदय रूपी वीणा के तंतुओं पर सुख दुख के विविध सुरों को आनन्द से बजाता है.

यह वही है जो इस माया के जाल को सुनहले और रुपहले, हरे और नीले क्षणिक रंगों में बुनता है और उन जालों में से अपने चरणों को बाहर निकलने देता है जिन के स्पर्श मात्र से मैं अपने आपको भूल जाता हूँ.

दिन आते है और युग के युग बीतते जाते हैं, यह केवल वही है जो मेरे हृदय को नाना नामों, नाना रूपों और हर्ष शोक के नाना उद्वेगों में घुमाता है.

बन्धन में मुक्ति

७३

त्याग मेरे लिए मुक्ति नहीं है. मुझे तो आनन्द के सहस्रों बंधनों में मुक्ति का रस आता है.

तू मेरे लिए सदा नाना रंगों और गन्धों के अमृत की वर्षा किया करता है और मेरे इस मिट्टी के पात्र को लबालब भर देता है.

मेरा संसार अपने सैकड़ों दीपों को तेरी ज्योति से प्रज्वलित करेगा और तेरे मन्दिर की वेदी पर उन्हें चढ़ायेगा.

नहीं, मैं अपनी इन्द्रियों के द्वार कभी बन्द न करूँगा, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध का सुख तेरे परमानन्द को उत्पन्न करेगा.

हाँ, मेरे सब भ्रम और संशय तेरे आनन्द की ज्योति में भस्म होजायँगे और मेरी सब बासनाएँ प्रेम रूपी फलों में परिणत हो जाएँगी.

प्रस्थान का समय

७४

दिन छिप गया है, पृथ्वी पर अन्धकार छाने लगा है. यह समय है कि अपनी गागर भरने के लिए मैं नदी को जाऊँ.

जल के गंभीर गान से संध्या समीर आकुल है. अरे, वह मुझे गोधूलि में प्रवेश करने के लिए बाहर बुलाती है. जन-हीन पथ में कोई आता जाता नहीं है, हवा चल रही है और तरंगे हिलोरें मार रही हैं.

मुझे नहीं मालूम कि मैं लौट कर घर आऊँगा, या नहीं ? मैं नहीं जानता कि वहाँ किस से भेंट होजाय ? वहाँ घाट पर छोटी सी नौका में बैठा हुआ वह अपरिचित जन अपनी वीणा बजा रहा है.

विश्वव्यापी पूजा

७५

हे प्रभु, हम जीवों को तू ने जो कुछ दिया है वह हमारी सब आवश्यकताओं को पूरा करता है, और फिर तेरे पास ज्यों का त्यों लौट जाता है.

नदी अपना नित्य का काम करती है और खेतों और बस्तियों में होकर वेग से बहती चली जाती है. तथापि उस की निरन्तर धारा तेरे चरणों की ओर प्रक्षालन के लिए घूम जाती है.

फूल अपने सौरभ से वायु को सुगंधित करते हैं तथापि उनकी अन्तिम सेवा यही है कि अपने को तेरे चरणों में अर्पण करें.

तेरी इस पूजा से संसार कुछ दरिद्री नहीं होता.

कवि के शब्दों का अर्थ लोग अपनी रुचि के अनुसार लगाते हैं किन्तु उनके वास्तविक अर्थ का लक्ष तू ही है.

ईश्वर के सन्मुख रहने की इच्छा

७६

हे मेरे जीवन स्वामी, क्या दिन प्रति दिन मैं तेरे सन्मुख खड़ा रह सकूँगा ? हे भुवनेश्वर, क्या कर जोड़ कर मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूँगा ?

क्या तेरे महान आकाश के नीचे निर्जन नीरव अवस्था में नम्र हृदय से मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूँगा ?

क्या तेरे इस कर्मग्रस्त संसार में जो परिश्रम और संग्राम के कोलाहल से आकुल है, दौड़-धूप में लगे हुए लोगों के बीच में रहते हुए मैं तेरे सन्मुख खड़ा रह सकूँगा ?

हे राजाधिराज, जब इस संसार में मेरा कार्य समाप्त हो जायगा, तो क्या मैं एकान्त और नीरव दशा में तेरे सन्मुख खड़ा रह सकूँगा ?

मनुष्य की सेवा ही ईश्वर की सेवा है

७७

मैं तुझे अपना ईश्वर मानता हूँ और इसलिए तुझ से दूर खड़ा रहता हूँ. मैं तुझे अपना नहीं समझता और इस-लिए तेरे निकटतर आने का साहस नहीं करता. मैं तुझे अपना पिता मानता हूँ और तेरे चरणों को प्रणाम करता हूँ, किन्तु मैं तुझे अपना मित्र नहीं समझता और इसलिए तेरा हाथ नहीं पकड़ता.

जहाँ तू नीचे उतर कर आता है और अपने आप को मेरा बतलाता है, वहाँ तुझे अपने हृदय से लगाने और अपना साथी मानने के लिए मैं खड़ा नहीं होता.

भाइयों में केवल तुझी को मैं अपना भाई समझता हूँ. मैं उनकी परवा नहीं करता, मैं अपनी कमाई में उनको सम्मिलित नहीं करता और इस प्रकार तुझे भी अपने सर्वस्व में हिस्सा नहीं देता.

मैं सुख दुख में उनका साथ नहीं देता और इस प्रकार तेरे पास भी नहीं खड़ा होता. मैं [दूसरों के लिए] अपना जीवन देने से हिचकिचाता हूँ और इस प्रकार जीवन महा-सागर में गोता नहीं लगाता.

खोया हुआ तारा

७८

जब विधाता ने सृष्टि-रचना का कार्य समाप्त किया,
तब नील आकाश में सब तारे चमकते हुए निकल आये और

सब देवता नवीन सृष्टि पर विचार करने के लिए देव-सभा में आ विराजे और इस प्रकार गान करने लगे, "अहा, कैसा शुद्ध आनन्द है ! अहा, कैसी पूर्ण छवि है !"

उस समय सभा में सहसा कोई बोल उठा, "अरे ज्योतिमाला में एक स्थान खाली है, जान पड़ता है कि एक तारा खो गया है."

उनकी वीणा का सुनहरा तार टूट गया, गाना बन्द होगया और वे सब भयभीत होकर चिल्ला उठे, "अरे हाँ, यह खोया हुआ तारा सब से श्रेष्ठ था और उसी से आकाश मंडल की शोभा थी.

उस दिन से सारा जगत उस तारे को ढूँढ़ रहा है. रात दिन बेचैनी रहती है और आँखें बन्द नहीं होती. सब कोई परस्पर कहते हैं कि उसके खो जाने से संसार का एक आनन्द खोगया.

घोर गंभीर रात्रि की नीरवता में तारे हँसते और आपस में कहते हैं—"स्तब्ध तारादल में उसकी खोज करना वृथा है, सब कहीं परिपूर्णता विराजमान है."

अभिलषित वेदना

७९

यदि इस जीवन में तेरा दर्शन करना मेरे भाग्य में नहीं है, तो ऐ मेरे प्रभु, मैं सदा यह अनुभव करता रहूँ और एक क्षण भर के लिए भी न भूलूँ कि मुझे तेरा दर्शन

प्राप्त नहीं हुआ, और सोते जागते सदा ही इस शोक की वेदना मेरे मन में बनी रहे.

और जैसे जैसे इस संसार की भरी हाट में मेरे दिन बीतते जायँ और नित्य की आय से मेरे हाथ भरते जायँ, तैसे तैसे मैं सदा यह अनुभव करूँ कि मुझे कोई लाभ नहीं हुआ—मैं यह कभी एक क्षण भर के लिए भी न भूलूँ कि मुझे तेरा दर्शन प्राप्त नहीं हुआ, और सोते जागते सदा ही इस शोक की वेदना मेरे मन में बनी रहे.

जब थक कर हाँफता हुआ मैं रास्ते के किनारे बैठ जाऊँ और धूल पर बिछौने बिछा दूँ तो मैं सदा यह अनुभव करूँ कि अभी दीर्घ यात्रा मेरे सामने है—मैं यह कभी एक क्षण के लिए भी न भूलूँ, और सोते जागते सदा ही इस शोक की वेदना मेरे मन में बनी रहे.

जब मेरा घर विविध अलंकारो से सुसज्जित किया जाय, उसमें खूब गाना बजाना और हँसी खुशी हो, तब मैं बराबर यह अनुभव करता रहूँ कि मैंने तुझे अपने घर में निमंत्रित नहीं किया है—मैं यह एक क्षण भर के लिए भी न भूलूँ और सोते जागते सदा ही इस शोक की वेदना मेरे मन में बनी रहे.

ब्रह्म में लीन होने की आकांक्षा

८०

हे नित्य तेजोमय सूर्य्य, मैं शरद-मेघ के उस बचे बचाये टुकड़े के समान हूँ जो आकाश में व्यर्थ भटकता फिरता है. अभी तेरे स्पर्श ने उसे पिघला कर अपने प्रकाश के साथ तन्मय नहीं किया है. इस प्रकार तुझ से बिछुड़ा हुआ मैं महीनों और वर्षों घड़ियाँ गिन गिन कर काट रहा हूँ.

यदि यही तेरी इच्छा है, और यदि यही तेरा खेल है, तो तू मेरे इस तुच्छ क्षणभंगुर अस्तित्व को विविध वर्णों मे रँग दे, सोने से सुनहरा कर दे, चंचल वायु पर उसे छोड़ दे और विविध आश्चर्य्यजनक रूपों में उसे फैलने दे.

और जब रात्रि को तू यह खेल समाप्त करना चाहेगा तब मैं अँधेरे में शुभ्र प्रभात की मुसक्यान में, निर्मल पवित्रता की शीतलता में परिणत होकर लोप हो जाऊँगा.

समय की विचित्र गति

८१

मैं ने नष्ट किये समय पर बहुधा शोक किया है. किन्तु, हे मेरे प्रभु, समय कभी व्यर्थ नष्ट नहीं हुआ क्योंकि मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण का नियन्ता तू है.

सब पदार्थों के भीतर रहकर तू बीजों में अंकुर, कलियों में फूल और फूलों में फल उत्पन्न करता है.

मैं थक कर और अपने आलसी बिछौने पर लेट कर यह सोच रहा था कि सब काम समाप्त हो गया, किन्तु जब मैं प्रातःकाल उठा तो क्या देखता हूँ कि बाटिका पुष्पों के अद्भुत दृश्यों से भरी पड़ी है.

अभी समय है

८२

हे प्रभु ! तेरे हाथ में अनन्त समय है. तेरे क्षणों की कोई गणना नहीं कर सकता.

रात दिन आते और चले जाते हैं. युग के युग पुष्पों के तुल्य खिलते और मुरझाते हैं. तू जानता है कि प्रतीक्षा कैसे करना चाहिए.

एक नन्हें से बनैले फूल को पूर्णता तक पहुँचाने के लिए एक एक करके शताब्दियाँ बराबर आती हैं.

हमारे पास वृथा नाश करने के लिए तनिक भी समय नहीं है और इस लिए हमें अपने अवसरों और सफलताओं के लिए छीना झपटी करनी चाहिए. हम इतने दरिद्री हैं कि विलम्ब नहीं कर सकते.

पर झगड़ा करने वालों के साथ झगड़ा करने में ही मेरा समय निकल जाता है और इस लिए तेरी वेदी अन्त तक बिल्कुल सूनी पड़ी रह जाती है.

दिन समाप्त होने पर मैं यह डरता हुआ झपटता हूँ कि कहीं तेरा द्वार बन्द न हो जाय, पर मुझे मालूम होता है कि अभी समय बाकी है.

अनोखा हार

८३

माँ, मै तेरे कण्ठ के लिए शोक के आँसुओं का मुक्ता-हार बनाऊँगा.

तारों ने तेरे चरणों को अलंकृत करने के लिए ज्योति के कंकण बनाये हैं पर मेरा हार तेरे वक्षस्थल पर शोभाय-मान होगा.

धन और यश तुझ से प्राप्त होते हैं और इनका देना न देना तेरे हाथ में है. परन्तु यह शोक मेरी निज की वस्तु है और जब मै उसे अपनी भेंट स्वरूप तेरे अर्पण करता हूँ तो तू मुझे अपना प्रसाद प्रदान करती है.

वियोग

८४

यह वियोग की ही पीड़ा है जो सारे भुवन में फैली हुई है और अनन्त आकाशमण्डल में अगणित रूपों को उत्पन्न कर रही है.

यह वियोग का ही शोक है कि तारागण एक दूसरे की ओर रात भर टकटकी लगाये रहते हैं और सावन के बरसाती अन्धकार में खड़खड़ाती पत्तियों से वीणा की ध्वनि निकलती है.

यह वियोग की ही सर्वव्यापिनी वेदना है जो मानवी गृहों में प्रेम और वासना, शोक और आनन्द में घनीभूत होती है और जो मुझ कवि के हृदय से झर झर कर गीतों के रूप में प्रवाहित होती है.

योद्धाओं का आवागमन

८५

जिस समय योद्धागण प्रभुगृह से आये थे उस समय उन्होंने अपना विपुल बल कहाँ छिपा दिया था? उनके कवच और वस्त्र कहाँ थे?

वे दीन और असहाय दिखाई पड़ते थे और चारों ओर से बाणों की वर्षा उन पर होती थी.

जिस समय योद्धागण प्रभुगृह को लौटे तब उन्होंने अपने विपुल बल को कहाँ छिपा दिया था?

उन्होंने अपनी तलवार रख दी थी और धनुष-बाण डाल दिया था, उनके मस्तक पर शान्ति विराजमान थी और उन्होंने अपने जीवन के फलों को अपने पीछे छोड़ दिया था—जिस दिन वे अपने प्रभुगृह को फिर वापस गये थे.

यमागमन

८६

तेरा सेवक, यम, आज मेरे द्वार पर पधारा है. वह अज्ञात-सागर को पार करके तेरा सन्देश मेरे द्वार पर लाया है.

रात अँधेरी है और मेरा हृदय भयातुर हो रहा है. तोभी मैं हाथ में दीपक लेकर अपने द्वार को खोलूँगा और वन्दना पूर्वक उसका स्वागत करूँगा, क्योंकि वह तेरा दूत है और मेरे द्वार पर खड़ा है.

हाथ जोड़ कर अश्रुजल से मैं उसकी पूजा करूँगा और अपने हृदय के रत्न को उसके चरणों में अर्पण कर दूँगा.

वह अपना कार्य्य पूरा करके लौट जायगा और मेरे प्रभात पर एक अँधेरी छाया छोड़ जायगा, और मेरे शून्य-गृह में केवल मेरी अनाश्रित आत्मा तेरी अन्तिम भेंट के लिए शेष रह जायगी

नित्यता की प्राप्ति

८७

अत्यन्त निराश होकर मैं जाता हूँ और उसे अपने घर के सब कोनों में ढूँढता हूँ पर वह मुझे नहीं मिलता.

मेरा घर छोटा है और जो कुछ वहाँ से एक बार जाता रहा वह फिर वहाँ नहीं प्राप्त हो सकता.

परन्तु, हे प्रभु, तेरे भवन का आदि अन्त नहीं है और उसे खोजते खोजते मैं तेरे द्वार पर आ पहुँचा हूँ.

मैं तेरे सन्ध्यागगन के सुनहरे शामयाने के नीचे खड़ा हूँ और अपने उत्सुक नयनों को तेरे मुखारविन्द की ओर उठाता हूँ.

मैं नित्यता के तट तक आगया हूँ जहाँ से कोई वस्तु लोप नहीं हो सकती; जहाँ से कोई आशा, कोई आनन्द या अश्रुभरी आँखों से देखे हुए किसी मुख का दृश्य, मिट नहीं सकता.

अरे, मेरे शून्य जीवन को उस अनन्त सागर में डुबकी दे और परिपूर्णता की अगाध गहराई में उसे डुबो दे. मुझे एक बार सारे विश्व के बीच में खोये हुए कोमल स्पर्श को अनुभव करने दे.

जीर्ण मन्दिर का देवता

८८

हे जीर्ण मन्दिर के देवता ! वीणा के टूटे तार अब तेरा गुणगान नहीं करते. अब सन्ध्या समय घण्टे

तेरी आरती की घोषणा नहीं देते. तेरे आसपास की वायु शान्त और स्थिर है.

वसन्त की मन्द वायु रह रह कर तेरे निर्जन भवन में उन फूलों के समाचार लाती है जो पूजा में अब तुझे नहीं चढ़ाए जाते.

तेरा पुराना पुजारी उस प्रसाद की खोज में भटक रहा है जो अभी तक उसे प्राप्त नहीं हुआ. सन्ध्या समय जब धूल, प्रकाश और अन्धकार तीनों मिलते हैं तब वह थका मॉदा और भूखा जीर्ण मन्दिर को वापस आता है.

हे जीर्ण मन्दिर के देवता, उत्सवों के कितने ही दिन तेरे पास होकर चुपचाप निकल जाते हैं, पूजा की बहुत सी रातें बीत जाती हैं और तेरे समीप एक दिया भी नहीं जलता.

प्रवीण शिल्पी अनेकों नवीन प्रतिमाएँ बनाते हैं और जब उनका समय आ जाता है तो वे विस्मृति की पवित्र धारा में विसर्जन कर दी जाती हैं.

किन्तु, अकेला जीर्ण मन्दिर का देवता, निरन्तर उपेक्षा के कारण, पूजा से वंचित रहता है.

मौनव्रती वैरागी

८६

अब न तो चिल्लाऊँ और न ज़ोर से पुकारूँ; यह मेरे स्वामी की इच्छा है. अब से मैं बहुत धीरे धीरे ही निवेदन करूँगा और मेरे हृदय का भाषण गीतों की गुनगुनाहट के रूप में हुआ करेगा.

लोग राजा की हाट को जा रहे हैं. सब खरीदने बेचने वाले वहाँ विद्यमान हैं. पर मैंने काम काज के घमासान में दोपहर की वेला—असमय में ही-सब कुछ त्याग दिया है.

तब तो इस असमय में ही मेरे उद्यान में फूलों को निकलने दो और मध्याह्न काल में ममाखियों को मृदुगुंजार करने दो.

भले बुरे के द्वन्द में मैंने अपना बहुत सा समय खर्च किया, परन्तु अब मेरे खाली दिनों के साथी की इच्छा मेरे हृदय को अपनी ओर खींच लेने की है. मुझे नहीं मालूम कि मैं इस प्रकार यकायक किस निष्प्रयोजन परिणाम के लिए बुलाया जाता हूँ ?

मृत्यु का आतिथ्य

९०

जब मृत्यु तेरे द्वार को खटखटायेगी तब तू उसे क्या भेंट करेगा ?

प्यारे, मैं अपने अतिथि के आगे अपने जीवन का भरपूर पात्र रख दूँगा; मैं उसे खाली हाथ कभी न जाने दूँगा.

जब अनन्तकाल में मृत्यु मेरे द्वार को खटखटायेगी तो मैं हेमन्त के सब दिवसों, वसंत की सब रात्रियों के फल फूल और अपने कार्य-ग्रस्त जीवन की सब उपार्जित और एकत्रित सम्पत्ति को उसके आगे रख दूँगा.

मृत्यु की स्नेहमयी प्रतीक्षा

९१

मृत्यु, ऐ मेरी मृत्यु, मेरे जीवन की अन्तिम पूर्णता, आ री, तू आ और मेरे कानों को मधुर सम्वाद सुना. मैंने तेरे आगमन की प्रतीक्षा की है और तेरे लिए ही मैंने जीवन के सब सुख दुख सहे हैं.

मैं जो कुछ हूँ, मेरे पास जो कुछ है, मैं जो कुछ आशा करता हूँ और मेरा प्रेम ये सब बड़ी गंभीर रीति से सदा तेरी ओर प्रवाहित होते रहे हैं. मेरे ऊपर तेरे नयनों का अन्तिम कटाक्ष पड़ते ही मेरा जीवन सदा के लिए तेरा हो जायगा.

पुष्प पिरो लिये गये और वर [भगवान] के लिए माला तैयार है. विवाह के [मृत्यु] पश्चात् बधू [भक्त] अपने घर से विदा होगी और अपने स्वामी से शून्य-रात्रि में अकेली मिलेगी.

मृत्यु के उस पार

९२

मैं जानता हूँ कि वह दिन आयेगा जब मुझे यह संसार फिर देखने को न मिलेगा और मै चुपचाप यहाँ से छुट्टी लूँगा और मेरे नेत्रों पर अन्तिम परदा पड़ जायगा.

तो भी रात्रि को तारे जगमगायेंगे प्रभात का उदय होगा और घड़ियाँ सागर-तरंगों की भाँति सुख दुख को उत्पन्न करती हुई बीतती जायँगी.

जब मैं अपने जीवन की घड़ियों के इस अन्त पर विचार करता हूँ तो क्षणिक काल की सीमा टूट जाती है और मैं मृत्यु के प्रकाश से तेरे उस लोक को देखता हूँ जहाँ अनन्त रत्न बिखरे पड़े हैं. उसका निकृष्ट से निकृष्ट स्थान भी दुर्लभ है और उसका नीच से नीच जीवन भी दुष्प्राप्य है.

जिन वस्तुओं की इच्छा मैं वृथा ही करता रहा और जो मुझे प्राप्त होगईं अब उन सब को जाने दो. बस, अब उन वस्तुओ पर मेरा प्रकृति प्रभुत्व होने दो जिनका अनादर और अपमान मैं अब तक करता रहा हूँ.

संसार से विदा

९३

मुझे छुट्टी मिल गई है. ऐ मेरे भाइयो ! मुझे बिदा करो. मैं तुम सब को प्रणाम करता हूं और रवाना होता हूँ.

यह लो मेरे द्वार की कुंजियाँ; मैं अपने घर के सब अधिकारों को तिलांजलि देता हूँ. मै तुम से केवल अन्तिम मधुर वचनों की प्रार्थना करता हूँ.

हम बहुत समय तक पड़ोसी होकर रहे, पर मैंने जितना पाया उतना दे न सका. अब दिन निकला है और वह दीपक बुझ गया जिससे मेरे अँधेरे कोने में प्रकाश होता था. मेरा बुलावा आया है और मैं यात्रा के लिए तैयार हूँ.

परलोक यात्रा

९४

ऐ मेरे मित्रो, अब मेरे जाने की बेला है. तुम सब मेरे लिए शुभ कामना करो. आकाश उषा से रक्तबर्ण हो रहा है और मेरा मार्ग सुहावना है.

यह न पूछो कि वहाँ ले जाने के लिए मेरे पास क्या है. मै अपनी यात्रा पर खाली हाथ और आशापूर्ण हृदय के साथ जाता हूँ.

मैं विवाह की माला पहनूँगा. पथिकों के से मेरे भगवे वस्त्र नहीं है. यद्यपि मार्ग में संकट है पर मेरे मन में कोई भय नहीं है.

मेरी यात्रा के समाप्त होने पर संध्या-तारा निकलेगा और सायंकाल की मधुर रागनियाँ राजद्वार पर वजाई जायँगी.

जीवन मरण की समता

९५

मुझे उस समय की कोई खबर नहीं जब मैंने पहले पहल इस जीवन में प्रवेश किया था.

वह कौन सी शक्ति थी जिसने अर्धरात्रि में अरण्य-कली की भाँति इस विपुल रहस्य में मुझे विकसित किया था.

जब प्रातःकाल मैंने प्रकाश को देखा तो मुझे उसी क्षण मालूम हुआ कि मै इस जगत में कोई अपरिचित जन नहीं हूँ और उस नाम रूप रहित अज्ञेय शक्ति ने मेरी माँ का रूप धारण कर मुझे अपनी गोद में ले लिया है.

इसी प्रकार मृत्यु के समय वही अज्ञात शक्ति ऐसे प्रगट होगी कि मानो उसका और मेरा परिचय सदा से था. मुझे अपना जीवन प्यारा है इस लिए मुझे मृत्यु भी प्यारी लगेगी.

जब माँ बच्चे को दाहिने स्तन से छुडाती है तो वह चीखता है पर दूसरे क्षण में ही जब वह उसे बायाँ स्तन देती है तो उसे आश्वासन होता है.

मेरे अन्तिम वचन

९६

जब मैं यहाँ से विदा होऊँ तब मेरे अन्तिम वचन ये हों कि, "मैंने जो कुछ देखा है, उससे बढ़ कर और कुछ नहीं हो सकता."

"मैंने इस कमल के (ब्रह्माण्ड) गुप्त मधु का आस्वादन किया है जो प्रकाश-सागर पर फैला हुआ है और इस प्रकार मेरा जीवन धन्य है"—ये मेरे अन्तिम वचन हों.

"असंख्य रूपों के इस क्रीड़ा-क्षेत्र में मै अपना खेल खेल चुका हूँ और यहाँ मुझे उसके दर्शन होगये जो रूप रहित है."

"मेरा सारा शरीर और अंग उसके स्पर्श से पुलकित हो गये हैं जो स्पर्श से परे है; और यदि मेरा अन्त यहाँ ही होना है तो भले ही हो"—ये मेरे अन्तिम वचन हों.

प्रकृतिप्रभु का बोध

९७

जब मैं तेरे साथ खेलता था तो मैंने कभी नहीं पूछा कि तू कौन है. मुझ में तब न तो संकोच था और न भय, मेरा जीवन प्रचंड क्रीड़ामय था.

प्रभात समय तू मुझे सखा की भाँति निद्रा से उठाता था और मुझे खेत खेत दौड़ाता फिरता था.

उन दिनों मैं उन गीतों का अर्थ समझने की कोई परवा नहीं करता था जिनको तू मुझे गाकर सुनाता था. बस मेरा कंठ स्वर में स्वर मिलाने लगता था और मेरा हृदय स्वर के चढ़ाव उतार पर नाचने लगता था.

अब जब खेल का समय बीत गया है तो सहसा एक विचित्र दृश्य मेरे सामने आता है. यह विश्व अपने सकल नीरव तारादल के साथ तेरे पद-कमलों में अपने नयन झुकाये चकित और निस्तब्ध खड़ा है.

काल बली से कोई न जीता

९८

मैं तुझे तेरी जीत की भेटों और अपनी हार के हारों से अलंकृत करूँगा. अपराजित रह कर भाग निकलना मेरी सामर्थ्य से सदा बाहर है.

मुझे निश्चय है कि मेरा गर्व खर्व होगा, मेरे जीवन के बंधन घोर व्यथा में टूट जायँगे और मेरा शून्य हृदय खोखले बाँस की तरह गा गा कर सिसकियाँ लेगा और पत्थर पसीज कर आँसू बहायेंगे.

मै निश्चय जानता हूँ कि कमल के शतदल सदा बंद न रहेंगे और उसके मधु का गुप्त स्थान प्रगट हो जायगा.

नीलाकाश से एक आँख मेरी ओर देखेगी और इशारे से मुझे चुपचाप अपनी ओर बुलायेगी. मेरे लिए कुछ शेष न रहेगा और तेरे चरण-तल में मुझे निरी मृत्यु ही मिलेगी.

हरि के हाथ निवाह

९९

जीवन रूपी नौका की पतवार को छोड़ते समय, मैं जानता हूँ कि, तू इसे अपने हाथ में ले लेगा, और जो कुछ किये जाने को है वह तुरन्त ही हो जायगा. अब दौड़धूप करना निष्फल है.

ऐ मन, अब अपने हाथ को खींच ले और अपनी हार को चुपचाप सह ले और जिस स्थिति में तू है उसी में बैठे रहने को अपना सौभाग्य समझ.

हवा के जरा जरा से झोंकों से मेरे ये दीपक बुझ जाते हैं और इन के बारम्बार जलाने के प्रयत्न में मैं और सब भूल जाता हूँ.

परन्तु इस बार मैं बुद्धिमत्ता से काम लूँगा और अपने आँगन में आसन बिछा कर अँधेरे में प्रतीक्षा करूँगा. ऐ मेरे प्रभु! जब कभी तेरी इच्छा हो तब चुपके से आ जाना और यहाँ पर बैठ जाना.

परब्रह्म में लय

१००

मैं आकारों के समुद्र मे इस आशा से गहरी डुबकी मारता हूँ कि निराकार का पूर्ण मोती मेरे हाथ आ जाय.

अब मैं इस काल-जर्जरित नौका में बैठ कर घाट घाट नहीं फिरूँगा. अब वह पुराने दिन बीत गए जब लहरों पर थपेड़ें खाना ही मेरा खेल था.

अब मैं उत्सुक हूँ कि मर कर अमरत्व में लीन हो जाऊँ.

मैं अपनी जीवन रूपी वीणा को वहाँ ले जाऊँगा जहाँ अथाह गहराई के समीप सभाभवन में तालध्वनि रहित गान होता है.

मैं इसे नित्यता के रागों में मिलाऊँगा और जब अन्तिम स्वर निकलने के पश्चात् मेरी वीणा शान्त हो चुकेगी तब मैं उसे शान्तिमय के चरणकमलों में समर्पण कर दूँगा.

कविता का प्रसाद

१०१

मैं जीवन भर अपने गीतों के द्वारा तुझे सदा ढूँढता रहा हूँ. ये गीत ही मुझे द्वार द्वार फिराते रहे और मैंने अपने तथा जगत के विषय में जो कुछ अनुभव एवं अन्वेषण किया, वह सब उन्हीं की सहायता का फल है.

मैं ने जो कुछ सीखा है वह सब इन्हीं गीतों ने मुझे सिखाया है. इन्हो ने मुझे गुप्त पथ दिखाये और मेरे हृदय रूपी क्षितिज पर मुझे बहुत से तारों का दर्शन कराया है.

वे सदा मेरे सुख दुख रूपी देश के रहस्यों के पथ-प्रदर्शक बने और मेरी यात्रा के अन्त में सन्ध्या समय न जाने किस राजभवन के द्वार पर मुझे लाकर खड़ा कर दिया.

अर्थ रहस्य

१०२

मैं लोगों के सम्मुख गर्व करता था कि मैंने तुझको जान लिया है. वे मेरे सब कार्यों में तेरे चित्र देखते हैं और मेरे पास आकर मुझ से पूछते हैं,-वह कौन है ? मैं नहीं जानता कि उन्हें कैसे उत्तर दूँ. मेरा कहना है कि वास्तव में मैं कुछ नहीं कह सकता. वे मुझ पर दोष लगाते हैं और मेरा तिरस्कार करते हुए चल देते हैं और तू वहाँ मुसकराता हुआ बैठा है.

मैं तेरी कथाओं को अमर गीतों में प्रकट करता हूँ और तेरा रहस्य मेरे हृदय से निकल पड़ता है. लोग मेरे पास आते है और पूछते हैं,—'तुम हमें अपने गीतों के अर्थ बताओ,' मैं नहीं जानता कि उन्हें क्या उत्तर दूँ. मैं कहता हूँ—'अरे ऐसा कौन है जो उनके अभिप्राय को समझता हो.' वे हँसते हैं और नितान्त तिरस्कार करते हुए चल देते हैं और तू वहाँ मुसकराता हुआ बैठा है.

पूर्ण प्रणाम

१०३

ऐ मेरे ईश्वर, मेरी सारी इन्द्रियाँ एक ही प्रणाम में तेरी ओर लग जायँ और इस संसार को तेरे चरणों पर पड़ा जान कर उस से संसर्ग करें.

जैसे सावन का मेघ बिना बरसे हुए पानी के भार से नीचे झुक जाता है वैसे ही मेरा सारा मन एक ही प्रणाम के करने में तेरे द्वार पर अति नम्र हो जाय.

मेरे सब गीतों के विविध रागों को एक धारा में एकत्र होने दे और एक ही प्रणाम में शान्तिसागर की ओर प्रवाहित होने दे.

जैसे घर के वियोग से व्याकुल हंसों का समूह रात दिन अपने पहाड़ी घोसलों की ओर उड़ता हुआ लौटता है वैसे ही मेरी आत्मा को एक ही प्रणाम में अपने सनातन वासस्थान की यात्रा करने दे.

समाप्त